चंद्रकांता संतति इक्कीसवां भाग

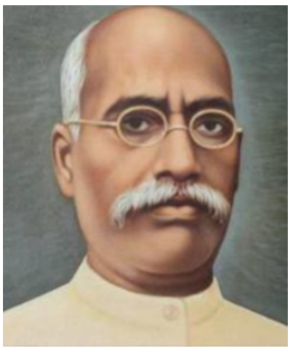

बाबू देवकीनंदन खत्री

चंद्रकांता संतति

इक्कीसवां भाग

बयान - 1

भूतनाथ अपना हाल कहते-कहते कुछ देर के लिए रुक गया और इसके बाद एक लंबी सांस लेकर पुनः यों कहने लगा -

भूत - मैं अपने को कैदियों की तरह और अपने सामने अपनी ही स्त्री को सरदारी के ढंग पर बैठे हुए देखकर एक दफे घबड़ा गया और सोचने लगा कि यह क्या मामला है मेरी स्त्री मुझे अपने सामने ऐसी अवस्था में देखे और सिवाय मुस्कराने के कुछ न

बोले!! अगर वह चाहती तो मुझे अपने पास गद्दी पर बैठा लेती क्योंकि इस कमरे में जितने दिखाई दे रहे हैं उन सभों की वह सरदार मालूम पड़ती है, इत्यादि बातों को सोचते-सोचते मुझे क्रोध चढ़ आया और मैंने लाल आंखों से उसकी तरफ देखकर कहा, "क्या तू मेरी स्त्री वही रामदेई है जिसके लिए मैंने तरह-तरह के कष्ट उठाये और जो इस समय मुझे कैदियों की अवस्था में अपने सामने देख रही है?'

इसके जवाब में मेरी स्त्री ने कहा, "हां, मैं वही रामदेई हूं जिसके लड़के को तुम किसी जमाने में अपना होनहार लड़का समझकर चाहते और प्यार करते थे मगर आज उसे दुश्मनी की निगाह से देख रहे हो; मैं वही रामदेई हूं जो तुम्हारे असली भेदों को न जानकर और तुम्हें नेक, ईमानदार और सच्चा ऐयार समझकर तुम्हारे फंदे में फंस गई थी मगर आज तुम्हारे असली भेदों का पता लग जाने के कारण डरती हुई तुमसे अलग हुआ चाहती हूं; मैं वही रामदेई हूं जिसे तुमने नकाबपोशों के मकान में देखा था; और मैं वही रामदेई हूं जिसने उस दिन तुम्हें जंगल में धोखा देकर बैरंग वापस होने पर मजबूर किया था, मगर मैं वह रामदेई नहीं हूं जिसे तुम 'लामाघाटी' में छोड़ आए हो।"

मुझे उस औरत की बातों ने ताज्जुब में डाल दिया और मैं हैरानी के साथ उसका मुंह देखने लगा, अनूठी बात तो यह थी कि वह अपनी बातों में शुरू से तो रामदेई अथवा मेरी स्त्री बनती चली आई मगर आखिर में बोल बैठी कि 'मगर मैं वह रामदेई नहीं हूं जिसे तुम लामाघाटी में छोड़ आए हो', आखिर बहुत सोच-विचारकर मैंने पुनः उससे कहा, "अगर तू वह रामदेई नहीं है जिसे मैं लामाघाटी में छोड़ आया था तो तू मेरी स्त्री भी नहीं है।"

स्त्री - तो यह कौन कहता है कि मैं तुम्हारी स्त्री हूं।

मैं - अभी इसके पहले तूने क्या कहा था?

स्त्री - (हंसकर) मालूम होता है कि तुम अपने होश में नहीं हो।

इतना सुनते ही मुझे क्रोध चढ़ आया और मैं अपनी हथकड़ी-बेड़ी तोड़ने का उद्योग करने लगा। यह हाल देखकर उस औरत को भी क्रोध आ गया और उसने अपनी एक सखी या लौंडी की तरफ देखकर कुछ इशारा किया। वह लौंडी इशारा पाते ही उठी और उसी जगह आले पर से एक बोतल उठा लाई जिसमें किसी प्रकार का अर्क था। उस अर्क से चुल्लू भर उसने दो-तीन छींटे मेरे मुंह पर दिये जिसके सबब से मैं बेहोश हो गया और मुझे तनोबदन की सुध न रही। मैं यह नहीं बता सकता कि इसके बाद कै

घंटे तक मैं उसके कब्जे में रहा परंतु जब होश में आया तो मैंने अपने को जंगल में एक पेड़ के नीचे पाया। घंटों तक ताज्जुब के साथ चारों तरफ देखता रहा, इसके बाद एक चश्मे के किनारे जाकर हाथ-मुंह धोने के बाद इस तरफ रवाना हुआ। बस यही सबब था कि मुझे हाजिर होने में देर हो गई।

भूतनाथ की बातें सुनकर सभों को ताज्जुब हुआ मगर वे दोनों नकाबपोश एकदम खिलखिलाकर हंस पड़े और उनमें से एक ने भूतनाथ की तरफ देखकर कहा -

नकाब - भूतनाथ, निःसंदेह तुम धोखे में पड़ गये, उस औरत ने तो जो कुछ तुमसे कहा उसमें शायद ही दो-तीन बातें सच हों।

भूत - (ताज्जुब से) सो क्या! उसने कौन-सी बातें सच कही थीं, कौन-सी झूठ?

नकाब - सो मैं नहीं कह सकता मगर आशा है कि शीघ्र ही तुम्हें सच-झूठ का पता लग जायगा।

भूतनाथ ने बहुत कुछ चाहा मगर नकाबपोश ने उसके मतलब की कोई बात न कही। थोड़ी देर तक इधर-उधर की बातें करके नकाबपोश बिदा हुए और जाते समय एक सवाल के जवाब में कह गये कि "आप लोग दो दिन और सब्र करें, इसके बाद कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह के सामने ही सब भेदों का खुलना अच्छा होगा क्योंकि उन्हें इन बातों के जानने का बड़ा शौक था।"

बयान - 2

रात आधी से कुछ ज्यादे जा चुकी है। महाराज सुरेन्द्रसिंह अपने कमरे में पलंग पर लेटे हुए जीतसिंह से धीरे-धीरे कुछ बातें कर रहे हैं जो चारपाई के नीचे उनके पास ही बैठे हैं। केवल जीतसिंह ही नहीं बल्कि उनके पास वे दो नकाबपोश भी बैठे हुए हैं जो दरबार में आकर लोगों को ताज्जुब में डाला करते हैं और जिनका नाम रामसिंह और लक्ष्मणसिंह है। हम नहीं कह सकते कि ये लोग कब से इस कमरे में बैठे हुए हैं या इसके पहले इन लोगों में क्या-क्या बातें हो चुकी हैं, मगर इस समय तो ये लोग कई ऐसे मामलों पर बातचीत कर रहे हैं जिनका पूरा होना बहुत जरूरी समझा जाता है। बात करते-करते एक दफे कुछ रुककर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने जीतसिंह से कहा, "इस राय में गोपालसिंह का भी शरीक होना उचित जान पड़ता है, किसी को भेजकर उन्हें बुलाना चाहिए।"

"जो आज्ञा" कहकर जीतसिंह उठे और कमरे के बाहर जाकर राजा गोपालसिंह को बुलाने के लिए चोबदार को हुक्म देने के बाद पुनः अपने ठिकाने पर बैठकर बातचीत करने लगे।

जीतसिंह - इसमें तो कोई शक नहीं कि भूतनाथ आदमी चालाक और पूरे दर्जे का ऐयार है मगर उसके दुश्मन लोग उस पर बेतरह टूट पड़े हैं और चाहते हैं कि जिस तरह बने उसे बर्बाद कर दें और इसलिए उसके पुराने ऐबों को उधेड़कर उसे तरह-तरह की तकलीफ दे रहे हैं।

सुरेन्द्र - ठीक है मगर हमारे साथ भूतनाथ ने सिवाय एक दफे चोरी करने के और कौन-सी बुराई की है जिसके लिए उसे हम सजा दें या बुरा कहें?

जीत - कुछ भी नहीं, और वह चोरी भी उसने किसी बुरी नीयत से नहीं की थी, इस विषय में नानक ने जो कुछ कहा था महाराज सुन ही चुके हैं।

सुरेन्द्र - हां मुझे याद है, और उसने हम लोगों पर अहसान भी बहुत किये हैं बल्कि यों कहना चाहिए कि उसी की बदौलत कमलिनी, किशोरी, लक्ष्मीदेवी और इंदिरा वगैरह की जानें बचीं और गोपालसिंह को भी उसकी मदद से बहुत फायदा पहुंचा है। इन्हीं सब बातों को सोच के तो देवीसिंह ने उसे अपना दोस्त बना लिया था मगर साथ ही इसके इस बात को भी समझ रखना चाहिए कि जब तक भूतनाथ का मामला तै नहीं हो जायगा तब तक लोग उसके ऐबों को खोद-खोदकर निकाला ही करेंगे और तरह-तरह की बातें गढ़ते रहेंगे।

एक नकाबपोश - सो तो ठीक है, मगर सच पूछिए तो भूतनाथ का मुकदमा ही कैसा और मामला ही क्या मुकदमा तो असल में नकली बलभद्रसिंह का है जिसने इतना बड़ा कसूर करने पर भी भूतनाथ पर इल्जाम लगाया है। उस पीतल वाली संदूकड़ी से तो हम लोगों को कोई मतलब ही नहीं, हां बाकी रह गया चीठियों वाला मुट्ठा जिसके पढ़ने से भूतनाथ लक्ष्मीदेवी का कसूरवार मालूम होता है, सो उसका जवाब भूतनाथ काफी तौर पर दे देगा और साबित कर देगा कि वे चीठियां उसके हाथ की लिखी हुई होने पर भी यह कसूरवार नहीं है और वास्तव में वह बलभद्रसिंह का दोस्त है दुश्मन नहीं।

सुरेन्द्र - (लंबी सांस लेकर) ओफओह! इस थोड़े से जमाने में कैसे-कैसे उलटफेर हो गए! बेचारे गोपालसिंह के साथ कैसी धोखेबाजियां की गईं! इन बातों पर जब हमारा ध्यान जाता है तो मारे क्रोध के बुरा हाल हो जाता है।

जीत - ठीक है, मगर खैर अब इन बातों पर क्रोध करने की जगह नहीं रही क्योंकि जो कुछ होना था हो गया। ईश्वर की कृपा से गोपालसिंह भी मौत की तकलीफ उठाकर बच गए और अब हर तरह से प्रसन्न हैं, इसके अतिरिक्त उनके दुश्मन लोग भी गिरफ्तार होकर अपने पंजे में आये हुए हैं।

सुरेन्द्र - बेशक ऐसा ही है मगर हमें कोई ऐसी सजा नहीं सूझती जो उनके दुश्मनों को देकर कलेजा ठंडा किया जाय और समझा जाय कि अब गोपालसिंह के साथ बुराई करने का बदला ले लिया गया।

महाराज सुरेन्द्रसिंह इतना कह ही रहे थे कि राजा गोपालसिंह कमरे के अंदर आते हुए दिखाई पड़े क्योंकि उनका डेरा इस कमरे से बहुत दूर न था।

राजा गोपालसिंह सलाम करके पलंग के पास बैठ गए और इसके बाद दोनों नकाबपोशों से भी साहब-सलामत करके मुस्कराते हुए बोले -

"आप लोग कब से बैठे हैं?'

एक नकाबपोश - हम लोगों को आये बहुत देर हो गई।

सुरेन्द्र - ये बेचारे कई घंटे से बैठे हुए हमारी तबीयत बहला रहे हैं और कई जरूरी बातों पर विचार कर रहे हैं।

गोपाल - वे कौन-सी बातें हैं?

सुरेन्द्र - यही लड़कों की शादी, भूतनाथ का फैसला, कैदियों का मुकदमा, कमलिनी और लाडिली के साथ उचित बर्ताव इत्यादि विषयों पर बातचीत हो रही है और सोच रहे हैं कि किस तरह क्या किया जाय तथा पहले क्या काम हो?

गोपाल - इस समय मैं भी इसी उलझन में पड़ा हुआ था। मैं सोया नहीं था बल्कि जागता हुआ इन्हीं बातों को सोच रहा था कि आपका संदेशा पहुंचा और तुरंत उठकर इस तरफ चला आया। (नकाबपोशों की तरफ बताकर) आप लोग तो अब हमारे घर के व्यक्ति हो रहे हैं अस्तु ऐसे विचारों में आप लोगों को शरीक होना ही चाहिए।

सुरेन्द्र - जीतसिंह कहते हैं कि कैदियों का मुकदमा होने और उनको सजा देने के पहले ही दोनों लड़कों की शादी हो जानी चाहिए जिससे कैदी लोग भी इस उत्सव को देखकर अपना जी जला लें और समझ लें कि उनकी बेईमानी, हरामजदगी और

दुश्मनी का नतीजा क्या निकला। साथ ही इसके एक बात का फायदा और भी होगा, अर्थात् कैदियों के पक्षपाती लोग भी, जो ताज्जुब नहीं कि इस समय भी कहीं इधर-उधर छिपे मन के लड्डू बना रहे हों, समझ जायेंगे कि अब उन्हें दुश्मनी करने की कोई जरूरत नहीं रही और न ऐसा करने से कोई फायदा ही है।

गोपाल - ठीक है, जब तक दोनों कुमारों की शादी न हो जाएगी तब तक तरह-तरह के खुटके बने ही रहेंगे। हो जाने के बाद मेहमानों के सामने ही कैदियों को जहन्नुम में पहुंचाकर दुनिया को दिखा दिया जाएगा कि बुरे कर्मों का नतीजा यह होता है।

सुरेन्द्र - खैर तो आपकी भी यही राय होती है?

गोपाल - बेशक!

सुरेन्द्र - (जीतसिंह की तरफ देखकर) तो अब हमें और किसी से राय मिलाने की जरूरत नहीं रही, आप हर तरह का बंदोबस्त शुरू कर दें और जहां-जहां न्यौता भेजना हो भेजवा दें।

जीत - जो आज्ञा। अब भूतनाथ के विषय में कुछ तै हो जाना चाहिए।

गोपाल - हम लोगों में से कौन-सा आदमी ऐसा है जो भूतनाथ के एहसान के बोझ से दबा हुआ न हो बाकी रही यह बात कि जैपाल ने भूतनाथ के हाथ की चीठियां कमलिनी और लक्ष्मीदेवी को दिखाकर भूतनाथ को दोषी ठहराया है, सो वास्तव में भूतनाथ दोषी नहीं है और इस बात का सबूत भी वह दे देगा।

सुरेन्द्र - हां तुमको तो इन सब बातों का सच्चा हाल जरूर ही मालूम होगा क्योंकि तुम्हीं ने कृष्णाजिन्न बनकर उसकी सहायता की थी, अगर वास्तव में वह दोषी होता तो तुम ऐसा करते ही क्यों?

गोपाल - बेशक यही बात है, इंदिरा का किस्सा आपको मालूम ही है क्योंकि मैंने आपको लिख भेजा था और आशा है कि आपको वे बातें याद होंगी?

सुरेन्द्र - हां मुझे बखूबी याद है, बेशक उस जमाने में भूतनाथ ने तुम लोगों की बड़ी सहायता की थी बल्कि इसी सबब से उससे और दारोगा से दुश्मनी हो गई थी, अस्तु कब हो सकता है कि भूतनाथ लक्ष्मीदेवी के साथ दगा करता जो कि दारोगा से दोस्ती और बलभद्रसिंह से दुश्मनी किए बिना हो ही नहीं सकता था! लेकिन आखिर बात क्या है, वे चीठियां भूतनाथ की लिखी हैं या नहीं फिर इस जगह एक बात का और भी

खयाल होता है वो यह कि उस मुट्ठे में दोनों तरफ की चीठियां मिली हुई हैं, अर्थात् जो रघुबीरसिंह ने भेजी वे भी हैं और जो रघुबर के नाम आई थीं वे भी हैं।

गोपाल - जी हां और यह बात भी बहुत से शकों को दूर करती है। असल यह है कि वे सब चीठियां भूतनाथ के हाथ की नकल की हुई हैं! वह रघुबरसिंह जो दारोगा का दोस्त था और जमानिया में रहता था उसी की यह सब कार्रवाई है और यह सब विष उसी के बोये हुए हैं। वह बहुत जगह इशारे के तौर पर अपना नाम 'भूत' लिखा करता था। आपने इंदिरा के हाल में पढ़ा होगा कि भूतनाथ बेनीसिंह बनकर बहुत दिनों तक रघुबरसिंह के यहां रह चुका है और उन दिनों यही भूतनाथ हेलासिंह के यहां रघुबरसिंह का खत लेकर आया-जाया करता था...।

सुरेन्द्र - ठीक है, मुझे याद है।

गोपाल - बस ये सब चीठियां उन्हीं चीठियों की नकलें हैं। भूतनाथ ने मौके पर दुश्मनों को कायल करने के लिए उन चीठियों की नकल कर ली थी और कुछ उनके घर से भी चुराई थीं। बस भूतनाथ की गलती या बेईमानी जो कुछ समझिये यही हुई कि उस समय कुछ नकदी फायदे के लिए उसने इस मामले को दबा रखा और उसी वक्त मुझ पर प्रकट न कर दिया। रिश्वत के लिए दारोगा को छोड़ देना और कलमदान के भेद को छिपा रखना भी भूतनाथ के ऊपर धब्बा लगाता है क्योंकि अगर ऐसा न होता तो मुझे यह बुरा दिन देखना नसीब न होता और इन्हीं भूलों पर आज भूतनाथ पछताता और अफसोस करता है। मगर आखिर में भूतनाथ ने इन बातों का बदला भी ऐसा अदा किया कि वे सब कसूर माफ कर देने के लायक हो गये।

सुरेन्द - उस कलमदान में क्या चीज थी?

गोपाल - उस कलमदान को दारोगा की उस गुप्त सभा का दफ्तर समझिये, सब सभासदों के नाम और सभा के मुख्य-मुख्य भेद उसी में बंद रहते थे, इसके अतिरिक्त दामोदरसिंह ने जो वसीयतनामा इंदिरा के नाम लिखा था वह भी उसी में बंद था।

सुरेन्द्र - ठीक है ठीक है, इंदिरा के किस्से में यह बात भी तुमने लिखी थी, हमें याद आया। मगर इसमें भी कोई शक नहीं कि उन दिनों लालच में पड़कर भूतनाथ ने बहुत बुरा किया और उसी सबब से तुम लोगों को तकलीफ उठानी पड़ी।

एक नकाबपोश - शायद भूतनाथ को इस बात की खबर न थी कि इस लालच का नतीजा कहां तक बुरा निकलेगा।

सुरेन्द्र - जो हो मगर उस समय की बातों पर ध्यान देने से यह भी कहना पड़ता है कि उन दिनों भूतनाथ एक हाथ से भलाई कर रहा था और दूसरे हाथ से बुराई।

गोपाल - ठीक है, बेशक ऐसी ही बात थी।

सुरेन्द्र - (जीतसिंह की तरफ देख के) भूतनाथ और इंद्रदेव को भी इसी समय यहां बुलाकर इस मामले को तै ही कर देना चाहिए।

"जो आज्ञा" कहकर जीतसिंह उठे और कमरे के बाहर जाकर चोबदार को हुक्म देने के बाद लौट आए। इसके बाद कुछ देर तक सन्नाटा रहा तब फिर गोपालसिंह ने कहा -

गोपाल - अपने खयाल में तो भूतनाथ ने कोई बुराई नहीं की थी क्योंकि बीस हजार अशर्फी दारोगा से वसूल करके उसे छोड़ देने पर भी उसने एक इकरारनामा लिखा लिया था कि 'वह (दारोगा) ऐसे किसी काम में शरीक न होगा और न खुद ऐसा कोई काम करेगा जिससे इंद्रदेव, सर्यू, इंदिरा और मुझ (गोपालसिंह) को किसी तरह का नुकसान पहुंचे'[1] मगर दारोगा फिर भी बेईमानी कर ही गया और भूतनाथ इकरारनामे के भरोसे बैठा रह गया। इससे खयाल होता है कि शायद भूतनाथ को भी इन मामलों की ठीक खबर न हो अर्थात मुंदर का हाल मालूम न हुआ हो, और वह लक्ष्मीदेवी के बारे में धोखा खा गया हो तो भी ताज्जुब नहीं।

सुरेन्द्र - हो सकता है। (कुछ देर तक चुप रहने के बाद) मगर यह तो बताओ कि इन सब मामलों की खबर तुम्हें कब और क्योंकर लगी?

गोपाल - इन सब बातों का पता मुझे भूतनाथ के गुरुभाई शेरसिंह की जुबानी लगा जो भूतनाथ को भाई की तरह प्यार करता है मगर उसकी इन सब लालच-भरी कार्रवाइयों के बुरे नतीजे को सोच और उसे पूरा कसूरवार समझकर उससे डरता और नफरत करता है। जिन दिनों रोहतासगढ़ का राजा दिग्विजयसिंह किशोरी को अपने किले में ले गया था इस सबब से शेरसिंह

1. इंदिरा का किस्सा, चंद्रकान्ता संतति, पंद्रहवां भाग, पहला बयान।

ने अपनी नौकरी छोड़ दी थी उन दिनों भूतनाथ छिपा-छिपा फिरता था। मगर जब शेरसिंह ने उस तिलिस्मी तहखाने में जाकर डेरा डाला[1] और छिपे-छिपे कमला और

कामिनी की मदद करने लगा तो उन्हीं दिनों उस तिलिस्मी तहखाने में जाकर भूतनाथ ने शेरसिंह से एक तौर पर (बहुत दिनों तक गायब रहने के बाद) नई मुलाकात की, मगर धर्मात्मा शेरसिंह को यह बात बहुत बुरी मालूम हुई...।

गोपालसिंह इतना कह ही रहे थे कि भूतनाथ और इंद्रदेव कमरे के अंदर आ पहुंचे और सलाम करके आज्ञानुसार जीतसिंह के पास बैठ गये।

जीत - (भूतनाथ और इंद्रदेव से) आप लोग बहुत जल्द आ गये।

इंद्रदेव - हम दोनों इसी जगह बरामदे के नीचे बाग में टहल रहे थे इसलिए चोबदार नीचे उतरने के साथ ही हम लोगों से जा मिला।

जीत - खैर, (गोपालसिंह से) हां तब?

गोपाल - अपनी नेकनामी में धब्बा लगने और बदनाम होने के डर से भूतनाथ की सूरत देखना भी शेरसिंह पसंद नहीं करता था बल्कि उसका तो यही बयान है कि 'मुझे भूतनाथ से मिलने की आशा ही न थी और मैं समझे हुए था कि अपने दोषों से लज्जित होकर भूतनाथ ने जान दे दी'। मगर जिस दिन उसने उस तहखाने में भूतनाथ की सूरत देखी, कांप उठा। उसने भूतनाथ की बहुत लानत-मलामत करने के बाद कहा कि 'अब तुम हम लोगों को अपना मुंह मत दिखाओ और हमारी जान और आबरू पर दया करके किसी दूसरे देश में चले जाओ'। मगर भूतनाथ ने इस बात को मंजूर न किया और यह कहकर अपने भाई से बिदा हुआ कि 'चुपचाप बैठे देखते रहो कि मैं किस तरह अपने पुराने परिचितों में प्रकट होकर खास राजा वीरेन्द्रसिंह का ऐयार बनता हूं'। बस इसके बाद भूतनाथ कमलिनी से जा मिला और जी जान से उसकी मदद करने लगा। मगर शेरसिंह को यह बात पसंद न आई। यद्यपि कुछ दिनों तक शेरसिंह ने कमलिनी तथा हम लोगों का साथ दिया, मगर डरते-डरते। आखिर एक दिन शेरसिंह ने एकांत में मुझसे मुलाकात की और अपने दिल का हाल तथा मेरे विषय में जो कुछ जानता था कहने के बाद बोला, 'यह सब हाल कुछ तो मुझे अपने भाई भूतनाथ की जुबानी मालूम हुआ और कुछ रोहतासगढ़ को इस्तीफा देने के बाद तहकीकात करने से मालूम हुआ मगर इस बात की खबर हम दोनों भाइयों में से किसी को भी न थी कि आपको मायारानी ने कैद कर रखा है। खैर अब ईश्वर की कृपा से आप छूट गये हैं इसलिए आपके संबंध में जो कुछ मुझे मालूम है आपसे कह दिया, जिससे आप दुश्मनों से अच्छी तरह बदला ले सकें। अब मैं अपना मुंह किसी को दिखाना नहीं चाहता क्योंकि मेरा भाई भूतनाथ जिसे मैं मरा हुआ

समझता था प्रकट हो गया और न मालूम क्या-क्या किया चाहता है। कहीं ऐसा न हो कि गेहूं के साथ घुन भी पिस जाए, अस्तु अब मैं जहां भागते बनेगा भाग जाऊंगा। हां राजा वीरेन्द्रसिंह का ऐयार बन गया तो पुनः प्रकट

1. देखिए चंद्रकान्ता संतति, तीसरा भाग, तेरहवां बयान।

हो जाऊंगा।' इतना कहकर शेरसिंह न मालूम कहां चला गया, मैंने बहुत कुछ समझाया मगर उसने एक न मानी। (कुछ रुककर) यही सबब है कि मुझे इन सब बातों से आगाही हो गई और भूतनाथ के भी बहुत से भेदों को जान गया।

जीत - ठीक है। (भूतनाथ की तरफ देख के) भूतनाथ, इस समय तुम्हारा ही मामला पेश है! इस जगह जितने आदमी हैं सभी कोई तुमसे हमदर्दी रखते हैं, महाराज भी तुमसे बहुत प्रसन्न हैं। ताज्जुब नहीं वह दिन आज ही हो कि तुम्हारे कसूर माफ किए जायें और तुम महाराज के ऐयार बन जाओ, मगर तुम्हें अपना हाल या जो कुछ तुमसे पूछा जाय उसका जवाब सच-सच कहना और देना चाहिए। इस समय तुम्हारा ही किस्सा हो रहा है।

भूतनाथ - (खड़े होकर सलाम करने के बाद) आज्ञा के विरुद्ध कदापि न करूंगा और कोई बात छिपा न रखूंगा।

जीत - तुम्हें यह तो मालूम हो गया कि सर्यू और इंदिरा भी यहां आ गई हैं जो जमानिया के तिलिस्म में फंस गई थीं और उन्होंने अपना अनूठा किस्सा बड़े दर्द के साथ बयान किया था।

भूतनाथ - (हाथ जोड़ के) जी हां, मुझ कम्बख्त की बदौलत उन्हें उस कैद की तकलीफ भोगनी पड़ी। उन दिनों बदकिस्मती ने मुझे हद से ज्यादे लालची बना दिया था। अगर मैं लालच में पड़कर दारोगा को न छोड़ देता तो यह बात न होती। आपने सुना ही होगा कि उन दिनों हथेली पर जान लेकर मैंने कैसे-कैसे काम किये थे। मगर दौलत के लालच ने मेरे सब कामों पर मिट्टी डाल दी। अफसोस, मुझे इस बात की कुछ भी खबर न हुई कि दारोगा ने अपनी प्रतिज्ञा के विरुद्ध काम किया, अगर खबर लग जाती तो उससे समझ लेता।

जीत - अच्छा यह बताओ कि तुम्हारा भाई शेरसिंह कहां है?

भूत - मेरे होने के सबब से न मालूम वह कहां जाकर छिपा बैठा है। उसे विश्वास है कि भूतनाथ जिसने बड़े-बड़े कसूर किए हैं कभी निर्दोष छूट नहीं सकता बल्कि ताज्जुब नहीं कि उसके सबब से मुझ पर भी किसी तरह का इल्जाम लगे। हां अगर वह मुझे बेकसूर छूटा हुआ देखेगा या सुनेगा तो तुरंत ही प्रकट हो जायेगा।

जीत - वह चीठियों वाला मुट्ठा तुम्हारे ही हाथ का लिखा हुआ है या नहीं?

भूत - जी वे चीठियां हैं तो मेरे ही हाथ की लिखी हुई मगर वे असल नहीं बल्कि असली चीठियों की नकल है जो कि मैंने जैपाल (रघुबरसिंह) के यहां से चोरी की थीं। असल में इन चीठियों का लिखने वाला मैं नहीं बल्कि जैपाल है।

जीत - खैर तो जब तुमने जैपाल के यहां से असल चीठियों की नकल की थी तो तुम्हें उसी समय मालूम हुआ होगा कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह पर क्या आफत आने वाली है?

भूत - क्यों न मालूम होता! परंतु रुपए के लालच में पड़कर अर्थात् कुछ लेकर मैंने जैपाल को छोड़ दिया। मगर बलभद्रसिंह से मैंने इस होनहार के बारे में इशारा जरूर कर दिया था, हां जैपाल का नाम नहीं बताया क्योंकि उससे रुपया वसूल कर चुका था। हां और यह कहना तो मैं भूल ही गया कि रुपये वसूल करने के साथ ही मैंने जैपाल से इस बात की कसम भी खिला ली थी कि अब वह लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह से किसी तरह की बुराई न करेगा। मगर अफसोस, उसने (जैपाल ने) मेरे साथ दगा करके मुझे धोखे में डाल दिया और वह काम कर गुजरा जो किया चाहता था। इसी तरह मुझे बलभद्रसिंह के बारे में भी धोखा हुआ। दुश्मनों ने उन्हें कैद कर लिया और मुझे हर तरह से विश्वास दिला दिया कि बलभद्रसिंह मर गये। लक्ष्मीदेवी के बारे में जो कुछ चालाकी दारोगा ने की उसका मुझे कुछ भी पता न लगा और न मैं कई वर्षों तक लक्ष्मीदेवी की सूरत ही देख सका कि पहचान लेता। बहुत दिनों के बाद जब मेंने नकली लक्ष्मीदेवी को देखा भी तो मुझे किसी तरह का शक न हुआ क्योंकि लड़कपन की सूरत और अधेड़पन की सूरत में बहुत बड़ा फर्क पड़ जाता है। इसके अतिरिक्त जिन दिनों मेंने नकली लक्ष्मीदेवी को देखा उस समय उनकी दोनों बहिनें अर्थात् श्यामा (कमलिनी) और लाडिली भी उसके साथ रहती थीं, जब वे ही दोनों उसकी बहिन होकर धोखे में पड़ गईं तो मेरी कौन गिनती है

बहुत दिनों के बाद जब यह कागज का मुट्ठा मेरे यहां से चोरी हो गया तब मैं घबड़ाया और डरा कि समय पर वह चोरी गया हुआ मुट्ठा मुझी को मुजरिम बना

देगा, और आखिर ऐसा ही हुआ। दुष्टों ने यही कागजों का मुट्ठा कैदखाने में बलभद्रसिंह को दिखाकर मेरी तरफ से उनका दिल फेर दिया और तमाम दोष मेरे ही सिर पर थोपा। इसके बाद और भी कई वर्ष बीत जाने पर जब राजा गोपालसिंह के मरने की खबर उड़ी और किसी को किसी तरह का शक न रहा तब धीरे-धीरे मुझे दारोगा और जैपाल की शैतानी का कुछ पता लगा, मगर फिर मैंने जान-बूझकर तरह दे दिया और सोचा कि अब उन बातों को खोदने से फायदा ही क्या जबकि खुद राजा गोपालसिंह ही इस दुनिया से उठ गये तो मैं किसके लिए इन बखेड़ों को उठाऊं (हाथ जोड़कर) बेशक यही मेरा कसूर है और इसलिए मेरा भाई भी रंज है। हां इधर जबकि मैंने देखा कि अब श्रीमान राजा वीरेन्द्रसिंह का दौरदौरा है और कमलिनी भी उस घर से निकल खड़ी हुई तब मैंने भी सिर उठाया और अबकी दफे नेकनामी के साथ नाम पैदा करने का इरादा कर लिया। इस बीच में मुझ पर बड़ी आफतें आईं, मेरे मालिक रणधीरसिंह भी मुझसे बिगड़ गये और मैं अपना काला मुंह लेकर दुनिया से किनारे हो बैठा तथा अपने को मरा हुआ मशहूर कर दिया इत्यादि कहां तक बयान करूं, बात तो यह है कि मैं सिर से पैर तक अपने को कसूरवार समझकर भी महाराजा की शरण में आया हूं।

जीत - तुम्हारी पिछली कार्रवाई का बहुत-सा हाल महाराज को मालूम हो चुका है, उस जमाने में इंदिरा को बचाने के लिए जो कार्रवाइयां तुमने की थीं उनसे महाराज प्रसन्न हैं, खास करके इसलिए कि तुम्हारे हर एक काम में दबंगता का हिस्सा ज्यादे था और तुम सच्चे दिल से इंद्रदेव के साथ दोस्ती का हक अदा कर रहे थे, मगर इस जगह एक बात का बड़ा ताज्जुब है।

भूत - वह क्या?

जीत - इंदिरा के बारे में जो काम तुमने किये थे वे इंद्रदेव से तो तुमने जरूर ही कहे होंगे

भूत - बेशक जो कुछ काम मैं करता था वह इंद्रदेव से पूरा-पूरा कह देता था।

जीत - तो फिर इंद्रदेव ने दारोगा को क्यों छोड़ दिया सजा देना तो दूर रहा इन्होंने गुरुभाई का नाता तक नहीं तोड़ा।

भूत - (एक लंबी सांस लेकर और उंगली से इंद्रदेव की तरफ इशारा करके) इनके जैसा भी बहादुर और मुरौवत का आदमी मैंने दुनिया में नहीं देखा। इनके साथ जो कुछ सलूक मैंने किया था उसका बदला एक ही काम से इन्होंने ऐसा अदा किया कि जो

इनके सिवाय दूसरा कर ही नहीं सकता था और जिससे मैं जन्म-भर इनके सामने सिर उठाने लायक न रहा, अर्थात् जब मैंने रिश्वत लेकर दारोगा को छोड़ देने और कलमदान दे देने का हाल इनसे कहा तो सुनते ही इनकी आंखों में आंसू भर आये और एक लंबी सांस लेकर इन्होंने मुझसे कहा, 'भूतनाथ, तुमने यह काम बहुत ही बुरा किया। किसी दिन इसका नतीजा बहुत ही खराब निकलेगा! खैर, अब तो जो कुछ होना था हो गया, तुम मेरे दोस्त हो अस्तु जो कुछ तुम कर आये उसे मैं भी मंजूर करता हूं और दारोगा को एकदम भूल जाता हूं। अब मेरी लड़की और स्त्री पर चाहे कैसी आफत क्यों न आये और मुझे भी चाहे कितना ही कष्ट क्यों ना भोगना पड़े मगर आज से दारोगा का नाम भी न लूंगा और न अपनी स्त्री के विषय में ही किसी से कुछ जिक्र करूंगा। जो कुछ तुम्हें करना हो करो और उस कम्बख्त दारोगा से भले ही कह दो कि 'इन बातों की खबर इंद्रदेव को नहीं दी गई'। मैं भी अपने को ऐसा ही बनाऊंगा कि दारोगा को किसी तरह का खुटका न होगा और वह मुझे निरा उल्लू ही समझता रहेगा।' इंद्रदेव की यह बात मेरे कलेजे में तीर की तरह लगी और मैं यह कहकर उठ खड़ा हुआ कि 'दोस्त, मुझे माफ करो, बेशक मुझसे बड़ी भूल हुई। अब मैं दारोगा को कभी न छोड़ूंगा और जो कुछ उससे लिया है उसे वापस कर दूंगा।' मगर इतना कहते ही इंद्रदेव ने मेरी कलाई पकड़ ली और जोर के साथ मुझे बैठाकर कहा, "भूतनाथ, मैंने यह बात तुमसे ताने के ढंग पर नहीं कही थी कि सुनने के साथ ही तुम उठ खड़े हुए। नहीं-नहीं, ऐसा कभी न होने पायेगा, हमने और तुमने जो कुछ किया सो किया और कहा, अब इसके विपरीत हम दोनों में से कोई भी न जा सकेगा।"

सुरेन्द्र - शाबाश!!

इतना कहकर सुरेन्द्रसिंह ने मुहब्बत की निगाह से इंद्रदेव की तरफ देखा और भूतनाथ ने फिर इस तरह कहना शुरू किया -

भूत - मैंने बहुत कुछ कहा मगर इंद्रदेव ने एक न मानी और बहुत बड़ी कसम देकर मेरा मुंह बंद कर दिया मगर इस बात का नतीजा यह निकला कि उसी दिन हम दोनों दोस्त दुनिया से उदासीन हो गये, मेरी उदासीनता में तो कुछ कसर रह गई मगर इंद्रदेव की उदासीनता में किसी तरह की कसर न रही। यही सबब था कि इंद्रदेव के हाथ से दारोगा बच गया और दारोगा इंद्रदेव की तरफ से (मेरे कहे मुताबिक) बेफिक्र रहा।

सुरेन्द्र - बेशक इंद्रदेव ने यह बड़े हौसले और सब्र का काम किया।

गोपाल - दोस्ती का हक अदा करना इसे कहते हैं, जितने एहसान भूतनाथ ने इन पर किये थे सभों का बदला एक ही बात से चुका दिया!!

भूत - (गोपालसिंह की तरफ देखकर) कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह से इंदिरा ने अपना हाल किस तरह पर बयान किया था सो मुझे मालूम न हुआ। अगर यह मालूम हो जाता तो अच्छा होता कि इंदिरा ने जो कुछ बयान किया था वह ठीक है अथवा उसने जो कुछ सुना था वह सच था?

गोपाल - जहां तक मेरा खयाल है मैं कह सकता हूं कि इंदिरा ने अपने विषय में कोई बात ज्यादे नहीं कही, बल्कि ताज्जुब नहीं कि वह कई बात मालूम न होने के कारण छोड़ गई हो। मैंने उसका पूरा-पूरा किस्सा महाराज को लिख भेजा था। (जीतसिंह की तरफ देख के) अगर मेरी वह चीठी यहां मौजूद हो तो भूतनाथ को दे दें, उसमें से इंदिरा का किस्सा पढ़कर ये अपना शक मिटा लें।

"हां वह चीठी मौजूद है" इतना कहकर जीतसिंह उठे और अलमारी से वह किताबनुमा चीठी निकालकर और इंदिरा का किस्सा बताकर भूतनाथ को दे दी। भूतनाथ उसे तेजी के साथ पढ़ गया और अंत में बोला, "हां ठीक है, करीब-करीब सभी बातें उसे मालूम हो गई थीं और आज मुझे भी एक बात नई मालूम हुई अर्थात् आखिरी मर्तबे जब मैं इंदिरा को दारोगा के कब्जे से निकालकर ले गया था और अपने एक अड्डे पर हिफाजत के साथ रख गया था तो वहां से एकाएक उसका गायब हो जाना मुझे बड़ा ही दुःखदायी हुआ। मैं ताज्जुब करता था कि इंदिरा वहां से क्योंकर चली गई। जब मैंने अपने आदमियों से पूछा तो उन्होंने कहा कि 'हम लोगों को कुछ भी नहीं मालूम कि वह कब निकलकर भाग गई, क्योंकि हम लोग कैदियों की तरह उस पर निगाह नहीं रखते थे बल्कि घर का आदमी समझकर कुछ बेफिक्र थे'। परंतु मुझे अपने आदमियों की बात पसंद न आई और मैंने उन लोगों को सख्त सजा दी। आज मालूम हुआ कि वह कांटा मायाप्रसाद का बोया हुआ था। मैं उसे अपना दोस्त समझता था मगर अफसोस, उसने मेरे साथ बड़ी दगा की!"

गोपाल - इंदिरा की जुबानी यह किस्सा सुनकर मुझे भी निश्चय हो गया कि मायाप्रसाद दारोगा का हितू है अस्तु मैंने उसे तिलिस्म में कैद कर दिया है। अच्छा यह तो बताओ कि उस समय जब तुम आखिरी मर्तबे इंदिरा को दारोगा के यहां से निकालकर अपने अड्डे पर रख आये और लौटकर पुनः जमानिया गये तो फिर क्या हुआ, दारोगा से कैसी निपटी, और सर्यू का पता क्यों न लगा सके?

भूत - इंदिरा को उस ठिकाने रखकर जब मैं लौटा तो पुनः जमानिया गया परंतु अपनी हिफाजत के लिए पांच आदमियों को अपने साथ लेता गया और उन्हें (अपने आदमियों को) कब क्या करना चाहिए इस बात को भी अच्छी तरह समझा दिया क्योंकि वे पांचों आदमी मेरे शागिर्द थे और कुछ ऐयारी भी जानते थे। मुझे सर्यू के लिए दारोगा से फिर मुलाकात करने की जरूरत थी मगर उसके घर में जाकर मुलाकात करने का इरादा न था क्योंकि मैं खूब समझता था कि यह 'दूध का जला छाछ फूंक के पीता होगा' और मेरे लिए अपने घर में कुछ न कुछ बंदोबस्त जरूर कर रखा होगा! अगर अबकी दिलेरी के साथ उसके घर में जाऊंगा, तो बेशक फंस जाऊंगा, इसलिए बाहर ही उससे मुलाकात करने का बंदोबस्त करने लगा। खैर, इस फेर में दस-बारह दिन बीत गये और इस बीच में मुलाकात करने का कोई अच्छा मौका न मिला। पता लगाने से मालूम हुआ कि वह बीमार है और घर से बाहर नहीं निकलता। यह बात मुझे मायाप्रसाद ने कही थी मगर मैंने मायाप्रसाद से इंदिरा के बारे में कुछ भी नहीं कहा और न राजा साहब (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) ही से कुछ कहा क्योंकि दारोगा को बेदाग छोड़ देने के लिए मेरे दोस्त इंद्रदेव ने पहले ही से तै कर लिया था, अब अगर राजा साहब से मैं कुछ कहता तो दारोगा जरूर सजा पा जाता। लेकिन मैं यह नहीं कह सकता कि मायाप्रसाद और दारोगा को इस बात का पता क्योंकर लग गया कि इंदिरा फलानी जगह है। खैर मुख्तसर यह है कि एक दिन स्वयम् मायाप्रसाद ने मुझसे कहा कि गदाधरसिंह, 'मैं तुम्हें इसकी इत्तिला देता हूं कि सर्यू निःसंदेह दारोगा की कैद में है, मगर बीमार है, अगर तुम किसी तरह दारोगा के मकान में चले जाओ तो उसे जरूर अपनी आंखों से देख सकोगे। मेरी इस बात में तुम किसी तरह शक न करो, मैं बहुत पक्की बात तुमसे कह रहा हूं।' मायाप्रसाद की बात सुनकर मुझे एक दफे जोश चढ़ आया और मैं दारोगा के मकान में जाने के लिए तैयार हो गया। मैं क्या जानता था कि मायाप्रसाद दारोगा से मिला हुआ है। खैर मैं अपनी हिफाजत के लिए कई तरह का बंदोबस्त करके आधी रात के समय कमंद के जरिये दारोगा के लंबे-चौड़े और शैतान की आंत की सूरत वाले मकान में घुस गया और चोरों की तरह टोह लगाता हुआ उस कमरे में जा पहुंचा जिसमें दारोगा एक गद्दी के ऊपर उदास बैठा हुआ कुछ सोच रहा था। उस समय उसके बदन पर कई जगह पट्टी बंधी हुई थी जिससे वह चुटीला मालूम पड़ता था और उसके सिर का भी यही हाल था। दारोगा मुझे देखते ही चौंक उठा और आंखें चार होने के साथ ही मैंने उससे कहा, 'दारोगा साहब, मैं आपके मकान में कैद होने के लिए नहीं आया हूं बल्कि सर्यू को देखने के लिए आया हूं जिसके इस मकान में होने का पता मुझे लग चुका है। अस्तु इस समय मुझसे किसी तरह की बुराई करने की उम्मीद न रखिये क्योंकि मैं

अगर आधे घंटे के अंदर इस मकान के बाहर होकर अपने साथियों के पास न चला जाऊंगा तो उन्हें विश्वास हो जायगा कि गदाधरसिंह फंस गया और तब वे लोग आपको हर तरह से बर्बाद कर डालेंगे जिसका कि मैं पूरा-पूरा बंदोबस्त कर आया हूं।'

इतना सुनते ही दारोगा खड़ा हो गया और उसने हंसकर जवाब दिया, 'मेरे लिए आपको इस कड़े प्रबंध की कोई आवश्यकता न थी और न मुझमें इतनी सामर्थ्य ही है कि आप जैसे ऐयार का मुकाबला करूं, मैं तो खुद आपकी तलाश में था कि किसी तरह आपको पाऊं और अपना कसूर माफ कराऊं। मुझे विश्वास है कि अब आप मेरा एक बड़ा कसूर माफ कर चुके हैं तो इसको भी माफ कर देंगे। गुस्से को दूर कीजिए, मैं फिर भी आपके लिए हाजिर हूं।'

मैं - (बैठकर और दारोगा को बैठाकर) कसूर माफ कर देने के लिए तो कोई हर्ज नहीं है मगर आइंदे के लिए कसूर न करने का वादा करके भी आपने मेरे साथ दगा की इसका मुझे जरूर बड़ा रंज है!

दारोगा - (हाथ जोड़कर) खैर जो हो गया सो हो गया, अब अगर फिर कोई कसूर मुझसे हो तो जो चाहे सजा दीजिएगा, मैं ओफ भी न करूंगा।

मैं - खेर एक दफे और सही, मगर कसूर के लिए आपको कुछ जुर्माना जरूर देना पड़ेगा।

दारोगा - यद्यपि आप मुझे कंगाल कर चुके हैं मगर फिर भी मैं आपकी आज्ञा-पालन के लिए हाजिर हूं।

मैं - दो हजार अशर्फी।

दारोगा - (अलमारी में से एक थैली निकालकर और मेरे सामने रखकर) बस एक हजार अशर्फी को कबूल कीजिए और...।

मैं - (मुस्कराकर) मैं कबूल करता हूं और अपनी तरफ से यह थैली आपको देकर इसके बदले में सर्यू को मांगता हूं जो इस समय आपके घर में है।

दारोगा - बेशक सर्यू मेरे घर में है और मैं उसे आपके हवाले करूंगा मगर इस थैली को आप कबूल कर लीजिए नहीं तो मैं समझूंगा कि आपने मेरा कसूर माफ नहीं किया।

मैं - नहीं-नहीं, मैं कसम खाकर कहता हूं कि मैंने आपका कसूर माफ कर दिया और खुशी से यह थैली आपको वापस करता हूं, अब मुझे सिवाय सर्यू के और कुछ नहीं चाहिए।

हम दोनों में देर तक इसी तरह की बातें हुईं और इसके बाद मेरी आखिरी बात सुनकर दारोगा उठ खड़ा हुआ और मेरा हाथ पकड़कर दूसरे कमरे की तरफ यह कहता हुआ ले चला कि 'आओ मैं तुमको सर्यू के पास ले चलूं, मगर अफसोस की बात है कि इस समय वह हद दर्जे की बीमार हो रही है!' खैर वह मुझे घुमाता-फिराता एक दूसरे कमरे में ले गया और वहां मैंने एक पलंग पर सर्यू को बीमार पड़े देखा। एक मामूली चिराग उससे थोड़ी ही दूर पर जल रहा था (लंबी सांस लेकर) अफसोस, मैंने देखा कि बीमारी ने उसे आखिरी मंजिल के करीब पहुंचा दिया है और वह इतनी कमजोर हो रही है कि बात करना भी उसके लिए कठिन हो रहा है। मुझे देखते ही उसकी आंखें डबडबा आईं और मुझे भी रुलाई आने लगी। उस समय मैं उसके पास बैठ गया और अफसोस के साथ उसका मुंह देखने लगा। उस वक्त दो लौंडियां उसकी खिदमत के लिए हाजिर थीं जिनमें से एक ने आगे बढ़कर रूमाल से उसके आंसू पोंछे और पीछे हट गई। मैंने अफसोस के साथ पूछा कि 'सर्यू यह तेरा क्या हाल है?

इसके जवाब में सर्यू ने बहुत बारीक आवाज में रुककर कहा, 'भैया, (क्योंकि वह प्रायः मुझे भैया कहकर ही पुकारा करती थी) मेरी बुरी अवस्था हो रही है। अब मेरे बचने की आशा न करनी चाहिए। यद्यपि दारोगा साहब ने मुझे कैद किया था मगर मैं इनका एहसान मानती हूं कि इन्होंने मुझे किसी तरह की तकलीफ नहीं दी बल्कि इस बीमारी में मेरी बड़ी हिफाजत की, दवा इत्यादि का भी पूरा प्रबंध रखा, मगर यह न बताया कि मुझे कैद क्यों किया था। खैर जो हो, इस समय तो मैं आखिरी दम का इंतजार कर रही हूं और सब तरफ से मोहमाया को छोड़ ईश्वर से लौ लगाने का उद्योग कर रही हूं। मैं समझ गई हूं कि तुम मुझे लेने के लिए आए हो मगर दया करके मुझे इसी जगह रहने दो और इधर-उधर कहीं मत ले जाओ, क्योंकि इस समय मैं किसी अपने को देख मायामोह में आत्मा को फंसाना नहीं चाहती और न गंगाजी का संबंध छोड़कर दूसरी किसी जगह मरना ही पसंद करती हूं। यहां यों भी अगर गंगाजी में फेंक दी जाऊंगी तो मेरी सद्गति हो जाएगी, बस यही आखिरी प्रार्थना है। एक बात और भी है कि मेरे लिए दारोगा साहब को किसी तरह की तकलीफ न देना और ऐसा करना जिससे इनकी जरा बेइज्जती न हो, यह मेरी वसीयत है और यही मेरी आरजू। अब श्रीगंगाजी को छुड़ाकर मुझे नर्क में मत डालो' इतना कह सर्यू कुछ देर के लिए चुप हो गई और मुझे उसकी अवस्था पर रुलाई आने लगी। मैं और भी

कुछ देर तक उसके पास बैठा रहा और धीरे-धीरे बातें भी होती रहीं मगर जो कुछ उसने कहा उसका तत्त्व यही था कि मुझे यहां से मत हटाओ और दारोगा को कुछ तकलीफ मत दो। उस समय मेरे दिल में यही बात आई कि इंद्रदेव को इस बात की इत्तिला दे देनी चाहिए, वह जैसी आज्ञा देंगे किया जाएगा। मगर अपना यह विचार मैंने दारोगा से नहीं कहा क्योंकि उसे मैं इंद्रदेव की तरफ से बेफिक्र कर चुका था और कह चुका था कि सर्यू और इंदिरा के साथ जो कुछ बर्ताव तुमने किया है उसकी इत्तिला मैं इंद्रदेव को न दूंगा, दूसरे को कसूरवार ठहराकर तुम्हारा नाम बचा जाऊंगा। अस्तु मैं सर्यू से दूसरे दिन मिलने का वादा करके वहां से उठा और अपने डेरे पर चला आया। यद्यपि रात बहुत कम बाकी रह गई थी परंतु मैंने उसी समय अपने एक आदमी को पत्र देकर इंद्रदेव के पास रवाना कर दिया और ताकीद कर दी कि एक घोड़ा किराए का लेकर दौड़ादौड़ चला जाय और जहां तक जल्द हो सके पत्र का जवाब लेकर लौट आवे। दूसरे दिन आधी रात जाते-जाते वह आदमी लौट आया और उसने इंद्रदेव का पत्र मेरे हाथ में दिया। लिफाफा खोलकर मैंने पढ़ा, उसमें यह लिखा हुआ था -

'तुम्हारा पत्र पढ़ने से कलेजा हिल गया। सच तो यह है कि दुनिया में मुझ-सा बदनसीब भी कोई न होगा! खैर परमेश्वर की मर्जी ही ऐसी है तो मैं क्या कर सकता हूं। दारोगा के बारे में मैंने जो प्रतिज्ञा तुमसे की है उसे झूठा न होने दूंगा। मैं अपने कलेजे पर पत्थर रखकर सब-कुछ सहूंगा मगर वहां जाकर बेचारी सर्यू को अपना मुंह न दिखाऊंगा। और न दारोगा से मिलकर उसके दिल में किसी तरह का शक ही आने दूंगा, हां अगर सर्यू की जान बचती नजर आवे या इस बीमारी से बच जाय तो उसे जिस तरह मुनासिब समझना मेरे पास पहुंचा देना और अगर वह मर जाय तो मेरी जगह तुम बैठे ही हो, उसकी अन्त्येष्टि क्रिया अपनी हिम्मत के मुताबिक करके मेरे पास आना। मेरी तबीयत अब दुनिया से हट गई, बस इससे ज्यादे मैं कुछ नहीं कहा चाहता, हां यदि कुछ कहना होगा तो तुमसे मुलाकात होने पर कहूंगा, आगे जो ईश्वर की मर्जी।

तुम्हारा वही - इंद्रदेव!'

इस चीठी को पढ़कर मैं बहुत देर तक रोता और अफसोस करता रहा, इसके बाद उठकर दारोगा के मकान की तरफ रवाना हुआ मगर आज भी अपने बचाव का पूरा-पूरा इंतजाम करता गया। मुलाकात होने पर दारोगा ने कल से ज्यादा खातिरदारी के साथ मुझे बैठाया और देर तक बातचीत करता रहा, मगर जब मैं सर्यू

के पास गया तो उसकी हालत कल से आज बहुत ज्यादे खराब देखने में आई, अर्थात् आज उसमें बोलने की भी ताकत न थी। मुख्तसर यह कि तीसरे दिन बेहोश और चौथे दिन आधी रात के समय मैंने सर्यू को मुर्दा पाया। उस समय मेरी क्या हालत थी सो मैं बयान नहीं कर सकता। अस्तु उस समय जो कुछ करना उचित था और मैं कर सकता था उसे सबेरा होने के पहले ही करके छुट्टी किया। अपने खयाल से सर्यू के शरीर की दाह क्रिया इत्यादि करके पंचतत्त्व में मिला दिया और इस बात की इत्तिला इंद्रदेव को दे दी। इसके बाद इंदिरा के लिए अपने अड्डे पर गया और वहां उसे न पाकर बड़ा ही ताज्जुब हुआ। पूछने पर मेरे आदमियों ने जवाब दिया कि 'हम लोगों को कुछ भी खबर नहीं कि कब और कहां भाग गई'। इस बात से मुझे संतोष न हुआ। मैंने आदमियों को सख्त सजा दी और बराबर इंदिरा का पता लगाता रहा। अब सर्यू के मिल जाने से मालूम हुआ कि उन दिनों मेरी कम्बख्त आंखों ने मेरे साथ दगा की और दारोगा के मकान में बीमार सर्यू को मैं पहचान न सका। मेरी आंखों के सामने सर्यू मर चुकी थी और मैंने खुद अपने हाथ से इंद्रदेव को यह समाचार लिखा था इसलिए उन्हें किसी तरह का शक न हुआ और सर्यू तथा इंदिरा के गम में ये दीवाने से हो गये, हर तरह के चैन और आराम को इन्होंने इस्तीफा दे दिया और उदासीन हो एक प्रकार से साधू ही बन बैठे। मुझसे भी मुहब्बत कम कर दी और शहर का रहना छोड़ अपने तिलिस्म के अंदर चले गये और उसी में रहने लगे, मगर न मालूम क्या सोचकर इन्होंने मुझे वहां का रास्ता न बताया। मुझ पर भी इस मामले का बड़ा असर पड़ा क्योंकि ये सब बातें मेरी ही नालायकी के सबब से हुई थीं अतएव मैंने उदासीन हो रणधीरसिंहजी की नौकरी छोड़ दी और अपने बाल-बच्चों और स्त्री को भी उन्हीं के यहां छोड़ बिना किसी को कुछ कहे जंगल और पहाड़ों का रास्ता लिया। उधर एक स्त्री से मैंने शादी कर ली थी जिससे नानक पैदा हुआ है। उधर भी कई ऐसे मामले हो गए जिनसे मैं बहुत उदास और परेशान हो रहा था, उसका हाल नानक की जुबानी तेजसिंह को मालूम ही हो चुका है बल्कि आप लोगों ने भी सुना होगा। अस्तु हर तरह से अपने को नालायक समझकर मैं निकल भागा और फिर मुद्दत तक अपना मुंह किसी को नहीं दिखाया। इधर जब जमाने ने पलटा खाया तब मैं कमलिनीजी से जा मिला। उन दिनों मेरे दिल में विश्वास हो गया था कि इंद्रदेव मुझसे रंज हैं अतः मैंने इनसे भी मिलना-जुलना छोड़ दिया बल्कि यों कहना चाहिए कि हमारी पुरानी दोस्ती का उन दिनों अंत हो गया था।

इंद्र - बेशक यही बात थी। स्त्री के मरने की खबर सुनकर मुझे बड़ा ही रंज हुआ। मुझे कुछ तो भूतनाथ की जुबानी और कुछ तहकीकात करने पर मालूम हो ही चुका था कि मेरी लड़की और स्त्री इसी की बदौलत जहन्नुम में मिल गईं, अस्तु मैंने भूतनाथ

की दोस्ती को तिलांजलि दे दी और मिलना-जुलना बिल्कुल बंद कर दिया मगर इससे कहा कुछ भी नहीं। क्योंकि मैं अपनी जुबान से दारोगा को माफ कर चुका था, इसके अतिरिक्त इसने मुझ पर कुछ एहसान भी जरूर ही किए थे, उनका भी खयाल था अस्तु मैंने कुछ कहा तो नहीं मगर इसकी तरफ से दिल हटा लिया और फिर अपना कोई भेद भी इसे नहीं बताया। कभी-कभी इससे मुझसे इधर-उधर मुलाकात हो जाती थी क्योंकि इसे मैंने अपने मकान का तिलिस्मी रास्ता नहीं दिखाया था। अगर यह कभी मेरे मकान पर आया भी तो आंखों में पट्टी बांधकर। यही सबब था कि इसे लक्ष्मीदेवी का हाल मालूम न था। लक्ष्मीदेवी के बारे में भी मैं इसे कसूरवार समझता था और मुझे यह भी विश्वास था कि यह अपना बहुत-सा भेद मुझसे छिपाता है और वास्तव में छिपाता था भी।

भूत - (इंद्रदेव से) नहीं सो बात तो नहीं है मेरे कृपालु मित्र।

इंद्र - अगर यह बात नहीं है तो वह कलमदान जिसे तुम आखिरी मर्तबे इंदिरा के साथ दारोगा के यहां से उठा लाये और मुझे दे गये थे मेरे यहां से गायब क्यों हो गया?

भूत - (मुस्कराकर) आपके किस मकान में से वह कलमदान गायब हो गया था?

इंद्र - काशीजी वाले मकान में से। उसी दिन तुम मुझसे मिलने के लिए वहां आये थे और उसी दिन वह कलमदान गायब हो गया।

भूत - ठीक है, तो उस कलमदान को चुराने वाला मैं नहीं हूं बल्कि मेरा लड़का नानक है, मैं तो यों भी अगर जरूरत पड़ती तो तुमसे वह कलमदान मांग सकता था। दारोगा की आज्ञानुसार लाडिली ने रामभोली बनकर नानक को धोखा दिया और आपके यहां से कलमदान चुरवा मंगवाया।[1]

गोपाल - हां ठीक है। इस बात को तो मैं भी स्वीकार करूंगा क्योंकि मुझे इसका असल हाल मालूम है। बेशक इसी ढंग से वह कलमदान वहां पहुंचा था और अंत में बड़ी मुश्किल से उस समय मेरे हाथ लगा, जब मैं कृष्णाजिन्न बनकर रोहतासगढ़ पहुंचा था। नानक को विश्वास है कि लाडिली ने रामभोली बनकर उसे धोखा दिया था मगर वास्तव में ऐसा नहीं हुआ। वह एक दूसरी ही ऐयारा थी जो रामभोली बनी थी, लाडिली ने तो केवल एक या दो दिन रामभोली का रूप धरा था।

जीत - (राजा गोपालसिंह से) वह कलमदान आपको कहां से मिल गया, दारोगा ने तो उसे बड़ी ही हिफाजत से रखा होगा!

1. देखिए चंद्रकान्ता संतति, चौथा भाग, छठवां बयान।

गोपाल - बेशक ऐसा ही है मगर भूतनाथ की बदौलत वह मुझे सहज ही में मिल गया। ऐसी-ऐसी चीजों को दारोगा बहुत गुप्त रीति से अपने अजायबघर में रखता था जिसकी ताली मायारानी से लेकर भूतनाथ ने मुझे दी थी। उस अजायबघर का भेद मेरे पिता और उस दारोगा के सिवाय कोई नहीं जानता था। मेरे पिता ही ने दारोगा को वहां का मालिक बना दिया था। जब भूतनाथ ने उसकी ताली मुझे ला दी तब मुझे वहां का पूरा-पूरा हाल मालूम हुआ।

जीत - (भूतनाथ से) खैर यह बताओ कि मनोरमा और नागर से तुमसे क्या संबंध था?

यह सवाल सुनकर भूतनाथ सन्न हो गया और सिर झुकाकर कुछ सोचने लगा। उस समय गोपालसिंह ने उसकी मदद की और जीतसिंह की तरफ देखकर कहा, "इस सवाल को छोड़ दीजिए क्योंकि वह जमाना भूतनाथ का बहुत ही बुरा तथा ऐयाशी का था। इसके अतिरिक्त जिस तरह राजा वीरेन्द्रसिंह ने रोहतासगढ़ के तहखाने में भूतनाथ का कसूर माफ किया था उसी तरह कमलिनी ने भी इसका वह कसूर कसम खाकर माफ कर दिया और साथ ही इसके उन ऐबों को छिपाने का बंदोबस्त कर दिया है।" उसके जवाब में जीतसिंह ने कहा, "खैर जाने दो देखा जायगा।"

गोपाल - जब से भूतनाथ ने कमलिनी का साथ किया है तब से इसने (भूतनाथ ने) जो-जो काम किये हैं उन पर ध्यान देने से आश्चर्य होता है। वास्तव में इसने वह काम किये हैं जिनकी ऐसे समय में सख्त जरूरत थी, मगर इसका लड़का नानक तो बिल्कुल ही बोदा और खुदगर्ज निकला। न तो कमलिनी के साथ मिलकर उसने कोई तारीफ का काम किया और न अपने बाप ही को किसी तरह की मदद पहुंचाई।

भूत - बेशक ऐसा ही हे, मैंने कई दफा उसे समझाया मगर...।

सुरेन्द्र - (गोपाल से) अच्छा अजायबघर में क्या बात है जिससे ऐसा अनूठा नाम उसका रखा गया। अब तो तुम्हें उसका पूरा-पूरा हाल मालूम हो ही गया होगा।

गोपाल - जी हां। एक किताब है जिसे 'ताली' के नाम से संबोधन करते हैं, उसके पढ़ने से वहां का कुल हाल मालूम होता है। वह बड़े हिफाजत और तमाशे की जगह थी और कुछ है भी क्योंकि अब उसका काफी हिस्सा मायारानी की बदौलत बर्बाद हो गया।

जीत - उस किताब (ताली) की बदौलत मायारानी को भी वहां का हाल मालूम हो गया होगा।

गोपाल - कुछ-कुछ। क्योंकि वह उस किताब की भाषा अच्छी तरह समझ नहीं सकती थी। इसके अतिरिक्त उस अजायबघर का जमानिया के तिलिस्म से भी संबंध है इसलिए कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह को वहां का हाल मुझसे भी ज्यादे मालूम हुआ होगा।

जीत - ठीक है, (सुरेन्द्रसिंह की तरफ देख के) आज यद्यपि बहुत-सी नई बातें मालूम हुई हैं परंतु फिर भी जब तक दोनों कुमार यहां न आ जायंगे तब तक बहुत-सी बातों का पता न लगेगा।

सुरेन्द्र - सो तो हई है, परंतु इस समय हम केवल भूतनाथ के मामले को तय किया चाहते हैं। जहां तक मालूम हुआ हे भूतनाथ ने हम लोगों के साथ सिवाय भलाई के बुराई कुछ भी नहीं की। अगर उसने बुराई की तो इंद्रदेव के साथ या कुछ गोपालसिंह के साथ, तो भी उस जमाने में जब इनसे और हमसे कुछ संबंध नहीं था। आज ईश्वर की कृपा से ये लोग हमारे साथ हैं बल्कि हमारे अंग हैं इससे कहा भी जा सकता है कि भूतनाथ हमारा ही कसूरवार है मगर फिर भी हम इसके कसूरों की माफी का अख्तियार इन्हीं दोनों अर्थात् गोपालसिंह और इंद्रदेव को देते हैं। ये दोनों अगर भूतनाथ का कसूर माफ कर दें तो हम इस बात को खुशी से मंजूर कर लेंगे। हां लोग यह कह सकते हैं कि इस माफी देने में बलभद्रसिंह को भी शरीक करना चाहिए था। मगर हम इस बात को जरूरी नहीं समझते क्योंकि इस समय बलभद्रसिंह को कैद से छुड़ाकर भूतनाथ ने उन पर बल्कि सच तो ये है कि हम लोगों पर भी बहुत बड़ा अहसान किया है। इसलिए अगर बलभद्रसिंह को इससे कुछ रंज हो तो भी माफी देने में वे कुछ उज्र नहीं कर सकते।

गोपाल - इसी तरह हम दोनों को भी माफी देने में किसी तरह का उज्र न होना चाहिए। इस समय भूतनाथ ने मेरी बहुत बड़ी मदद की है और मेरे साथ मिलकर ऐसे अनूठे काम किये हैं कि जिनकी तारीफ सहज में नहीं हो सकती। इस हमदर्दी और

मदद के सामने उन कसूरों की कुछ भी हकीकत नहीं अस्तु मैं इससे बहुत प्रसन्न हूं और सच्चे दिल से इसे माफी देता हूं।

इंद्रदेव - माफी देनी ही चाहिए और जब आप माफी दे चुके तो मैं भी दे चुका, ईश्वर भूतनाथ पर कृपा करे जिससे अपनी नेकनामी बढ़ाने का शौक इसके दिल में दिन-दिन तरक्की करता रहे। सच तो यह है कि कमलिनी की बदौलत इस समय हम लोगों को यह शुभ दिन देखने में आया और जब कमलिनी ने इससे प्रसन्न हो इसके कसूर माफ कर दिए तो हम लोगों को बाल बराबर भी उज्र नहीं हो सकता।

जीत - बेशक, बेशक!

सुरेन्द्र - इसमें कुछ भी शक नहीं! (भूतनाथ की तरफ देख के) अच्छा भूतनाथ, तुम्हारा सब कसूर माफ किया जाता है और इन दिनों हम लोगों के साथ तुमने जो-जो नेकियां की हैं उनके बदले में हम तुम पर भरोसा करके तुम्हें अपना ऐयार बनाते हैं।

इतना कहकर सुरेन्द्रसिंह उठ बैठे और अपने सिरहाने के नीचे से अपना खास बेशकीमती खंजर निकालकर भूतनाथ की तरफ बढ़ाया। भूतनाथ खड़ा हो गया और झुककर सलाम करने के बाद खंजर ले लिया और इसके बाद जीतसिंह, गोपालसिंह और इंद्रदेव को भी सलाम किया। जीतसिंह ने अपना खास ऐयारी का बटुआ भूतनाथ को दे दिया। गोपालसिंह ने वह तिलिस्मी तमंचा जिससे आखिरी वक्त मायारानी ने काम लिया था और जो इस समय उनके पास था, गोली बनाने की तरकीब सहित भूतनाथ को दिया और इंद्रदेव ने यह कहकर उसे गले से लगा लिया कि "मुझ फकीर के पास इससे बढ़कर और कोई चीज नहीं है कि मैं फिर तुम्हें अपना भाई बनाकर ईश्वर से प्रार्थना करूं कि अब इस नाते में किसी तरह का फर्क न पड़ने पावे।"

इसके बाद दोनों आदमी अपनी-अपनी जगह बैठ गये और भूतनाथ ने हाथ जोड़कर सुरेन्द्रसिंह से कहा, "आज मैं समझता हूं कि मुझ-सा खुशनसीब इस दुनिया में दूसरा कोई भी नहीं है। बदनसीबी के चक्कर में पड़कर मैं वर्षों परेशान रहा, तरह-तरह की तकलीफें उठाईं, पहाड़-पहाड़ और जंगल-जंगल मारा फिरा, साथ ही इसके पैदा भी बहुत ही किया, और बिगाड़ा भी बहुत परंतु सच्चा सुख नाममात्र के लिए एक दिन भी न मिला और न किसी को मुंह दिखाने की अभिलाषा ही रह गई। अंत में न मालूम किस जन्म का पुण्य सहायक हुआ जिसने मेरे रास्ते को बदल दिया और जिसकी बदौलत आज मैं इस दर्जे को पहुंचा। अब मुझे किसी बात की परवाह नहीं

रही। आज तक जो मुझसे दुश्मनी रखते थे कल से वे मेरी खुशामद करेंगे, क्योंकि दुनिया का कायदा ही ऐसा है। महाराज इस बात का भी निश्चय रखें कि उस पीतल की सन्दूकड़ी से महाराज या महाराज के पक्षपातियों का कुछ भी संबंध नहीं है, जो नकली बलभद्रसिंह की गठरी में से निकली है और जिसके ध्यान ही से मेरे रोंगटे खड़े होते हैं। मैं उस भेद को भी महाराज से छिपाया नहीं चाहता, हां यह इच्छा है कि सर्वसाधारण में वह भेद फैलने न पावे। मैंने उसका कुछ हाल देवीसिंह से कह दिया है, आशा है कि वे महाराज से जरूर अर्ज करेंगे।

जीत - खैर उसके लिए तुम चिंता न करो, जैसा होगा देखा जायगा। अब अपने डेरे पर जाकर आराम करो, महाराज भी आज रात भर जागते ही रहे हैं।

गोपाल - जी हां, अब तो नाममात्र को रात बच गई होगी।

इतना कहकर राजा गोपालसिंह उठ खड़े हुए और सभों को साथ लिए हुए कमरे के बाहर चले गए।

बयान - 3

इस समय रात बहुत कम बाकी थी और सुबह की सफेदी आसमान पर फैला ही चाहती थी। और लोग तो अपने-अपने ठिकाने चले गए और दोनों नकाबपोशों ने भी अपने घर का रास्ता लिया, मगर भूतनाथ सीधे देवीसिंह के डेरे पर चला गया। दरवाजे ही पर पहरे वाले की जुबानी मालूम हुआ कि वे सोए हैं परंतु देवीसिंह को न मालूम किस तरह भूतनाथ के आने की आहट मिल गई (शायद जागते हों) अस्तु वे तुरंत बाहर निकल आए और भूतनाथ का हाथ पकड़ के कमरे के अंदर ले गए। इस समय वहां केवल एक शमादान की मद्धिम रोशनी हो रही थी, दोनों आदमी फर्श पर बैठ गए और यों बातचीत होने लगी -

देवी - कहो इस समय तुम्हारा आना कैसे हुआ क्या कोई नई बात हुई?

भूत - बेशक नई बात हुई और वह इतनी खुशी की हुई कि जिसके योग्य मैं नहीं था।

देवी - (ताज्जुब से) वह क्या?

भूत - आज महाराज ने मुझे अपना ऐयार बना लिया और इज्जत के लिए मुझे यह खंजर दिया है।

इतना कहकर भूतनाथ ने महाराज का दिया हुआ खंजर और जीतसिंह तथा गोपालसिंह का दिया हुआ बटुआ और तमंचा देवीसिंह को दिखाया और कहा, "इसी बात की मुबारकबाद देने के लिए मैं आया हूं कि तुम्हारा एक नालायक दोस्त इस दर्जे को पहुंच गया है।"

देवी - (प्रसन्न होकर और भूतनाथ को गले से लगाकर) बेशक यह बड़ी खुशी की बात है, ऐसी अवस्था में तुम्हें अपने पुराने मालिक रणधीरसिंह को भी सलाम करने के लिए जाना चाहिए।

भूत - जरूर जाऊंगा।

देवी - यह कार्रवाई कब हुई।

भूत - अभी थोड़ी ही देर हुई। मैं इस समय महाराज के पास से ही आ रहा हूं।

इतना कहकर भूतनाथ ने आज रात का बिल्कुल हाल देवीसिंह से बयान किया। इसके बाद भूतनाथ और देवीसिंह में देर तक बातचीत होती रही और जब दिन अच्छी तरह निकल आया तब दोनों ऐयार वहां से उठे और स्नान-संध्या की फिक्र में लगे।

जरूरी कामों से निश्चिंती पा और स्नान-पूजा से निवृत्त होकर भूतनाथ अपने पुराने मालिक रणधीरसिंह के पास चला गया। बेशक उसके दिल में इस बात का खुटका लगा हुआ था कि उसका पुराना मालिक उसे देखकर प्रसन्न न होगा बल्कि सामना होने पर भी कुछ देर तक उसके दिल में इस बात का गुमान बना रहा, मगर जिस समय भूतनाथ ने अपना खुलासा हाल बयान किया उस समय रणधीरसिंह को बहुत मेहरबान और प्रसन्न पाया। रणधीरसिंह ने उसको खिलअत और इनाम भी दिया और बहुत देर तक उससे तरह-तरह की बातें करते रहे।

बयान - 4

यह बात तो तै हो चुकी थी कि सब कामों के पहले कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह की शादी हो जानी चाहिए अस्तु इसी खयाल से जीतसिंह शादी के इंतजाम में जी जान से कोशिश कर रहे हैं और इस बात की खबर पाकर सभी प्रसन्न हो रहे हैं कि आज दोनों कुमार यहां आ जायेंगे और शीघ्र ही उनकी शादी भी हो जायेगी। महाराज की आज्ञानुसार जीतसिंह मुलाकात करने के लिए रणधीरसिंह के पास गये और हर तरह की जरूरी बातचीत करने के बाद इस बात का फैसला भी कर आये कि किशोरी

के साथ ही साथ कामिनी का भी कन्यादान रणधीरसिंह ही करेंगे। साथ ही इसके रणधीरसिंह की यह बात भी जीतसिंह ने मंजूर कर ली कि इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह के आने के पहले किशोरी और कामिनी उनके (रणधीरसिंह के) खेमे में पहुंचा दी जायेंगी। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात किशोरी और कामिनी बड़ी हिफाजत के साथ रणधीरसिंह के खेमे में पहुंचा दी गईं और बहुत से फौजी सिपाहियों के साथ पन्नालाल, रामनारायण, चुन्नीलाल और पंडित बद्रीनाथ ऐयार खास उनकी हिफाजत के लिए छोड़ दिए गए।

आज कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह के आने की उम्मीद में लोग खुशी-खुशी तरह-तरह के चर्चे कर रहे हैं। आज ही के दिन आने के लिए दोनों कुमारों ने चीठी लिखी थी इसलिए आज उनके दादा-दादी, बाप-मां, दोस्तों और मुहब्बतियों को उम्मीद हो रही है कि उनकी तरसती हुई आंखें ठंडी होंगी और जुदाई के सदमों से मुर्झाया हुआ दिल हरा होगा। अहलकार और खैरखाह लोग जरूरी कामों को भी छोड़कर तिलिस्मी इमारत में इकट्ठे हो रहे हैं। इसी तरह हर एक अदना और आला दोनों कुमारों के आने की उम्मीद में खुश हो रहा है। गरीबों और मोहताजों की खुशी का कोई ठिकाना ही नहीं, उन्हें इस बात का पूरा विश्वास हो रहा है कि अब उनका दारिद्रय दूर हो जायगा!

दो पहर दिन ढलने के बाद नकाबपोश भी आकर हाजिर हो गए हैं, केवल वे ही नहीं बल्कि उनके साथ और भी कई नकाबपोश हैं, जिनके बारे में लोग तरह-तरह के चर्चे कर रहे हैं और साथ ही यह भी कह रहे हैं कि "जिस समय ये नकाबपोश लोग अपने चेहरों से नकाबें हटावेंगे उस समय जरूर कोई-न-कोई अनूठी घटना देखने-सुनने में आवेगी।"

नकाबपोशों की जुबानी यह तो मालूम हो ही चुका था कि दोनों कुमार उसी पत्थर वाले तिलिस्मी चबूतरे के अंदर से प्रकट होंगे जिस पर पत्थर का आदमी सोया हुआ है, इसलिए इस समय महाराज, राजा साहब और सलाहकार लोग उसी दालान में इकट्ठे हो रहे हैं और वह दालान भी सजा-सजाकर लोगों के बैठने लायक बना दिया गया है।

तीन पहर दिन बीत जाने पर चबूतरे के अंदर से कुछ विचित्र ही ढंग के बाजे की आवाज आने लगी जो कि भारी मगर सुरीली थी और जिसके सबब से लोगों का ध्यान उसी तरफ खिंचा। महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह, गोपालसिंह तथा दोनों नकाबपोश उठकर उस चबूतरे के पास गये। ये लोग बड़े गौर

से उस चबूतरे की अवस्था पर ध्यान दिये रहे क्योंकि इस बात का पूरा गुमान था कि पहले की तरह आज भी उस चबूतरे का अगला हिस्सा किवाड़ के पल्ले की तरह खुलकर जमीन के साथ लग जायगा। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् जिस तरह बलभद्रसिंह के आने और जाने के वक्त उस चबूतरे का हिस्सा खुल गया था उसी तरह इस समय भी वह किवाड़ के पल्ले की तरह धीरे-धीरे खुलकर जमीन के साथ लग गया और उसके अंदर से कुंअर इंद्रजीतसिंह तथा आनंदसिंह बाहर निकलकर महाराज सुरेन्द्रसिंह के पैरों पर गिर पड़े। उन्होंने बड़े प्रेम से उठाकर छाती से लगा लिया। इसके बाद दोनों कुमारों ने अपने पिता का चरण छुआ फिर जीतसिंह और तेजसिंह को प्रणाम करने के बाद राजा गोपालसिंह से मिले। इसके बाद बारी-बारी नकाबपोशों, ऐयारों, दोस्तों से भी मुलाकात की।

बंदोबस्त पहले से ही हो चुका था और इशारा भी बंधा हुआ था, अतएव जिस समय कुमार महाराज के चरणों पर गिरे हैं उसी समय फाटक पर से बाजे की आवाज आने लगी, जिससे बाहर वालों को भी मालूम हो गया कि कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह आ गये।

इस समय की खुशी का हाल लिखना हमारी ताकत से बाहर है, हां इसका अंदाजा पाठकगण स्वयं कर सकते हैं कि जब दोनों कुमार मिलन के लिए औरतों के महल में अंदर गए तो खुशी का दरिया कितने जोश के साथ उमड़ा होगा। महल के अंदर दोनों कुमारों का इंतजार बनिस्बत बाहर के ज्यादा होगा यह सोचकर महाराज ने दोनों कुमारों को ज्यादे देर तक बाहर रोकना मुनासिब न समझकर शीघ्र ही महल में जाने की आज्ञा दी और दोनों कुमार भी खुशी-खुशी महल के अंदर जाकर सभों से मिले। उनकी मां और दादी की बढ़ती हुई खुशी का तो आज अंदाज करना बहुत ही कठिन है, जिन्होंने लड़कों की जुदाई तथा रंज और नाउम्मीदी के साथ ही साथ तरह-तरह की खबरों से पहुंची हुई चोटों को अपने नाजुक कलेजों पर सम्हालकर और देवताओं की मन्नतें मान-मानकर आज का दिन देखने के लिए अपनी नन्ही-सी जान को बचा रखा था। अगर उन्हें समय और नीति पर विशेष ध्यान न रहता तो आज घंटों तक अपने बच्चों को कलेजे से अलग करके बातचीत करने और महल के बाहर जाने का मौका न देतीं।

दोनों कुमार खुशी-खुशी सभों से मिले। एक-एक करके सभों से कुशल-मंगल पूछा, कमलिनी और लाडिली से भी चार आंखें हुईं मगर किशोरी और कामिनी की सूरत दिखाई न पड़ी, जिनके बारे में सुन चुके थे कि महल के अंदर पहुंच चुकी हैं। इस

सबब से उनके दिल को जो कुछ तकलीफ थी उसका अंदाज औरों को तो नहीं मगर कुछ-कुछ कमलिनी और लाडिली को मिल गया और उन्होंने बात ही बात में इस भेद को खुलवाकर कुमारों की तसल्ली करवा दी।

थोड़ी देर तक दोनों भाई महल के अंदर रहे और इस बीच में बाहर से कई दफे तलबी का संदेश पहुंचा, अस्तु पुनः मिलने का वादा करके वहां से उठकर वे बाहर की तरफ रवाना हुए और उस आलीशान कमरे में पहुंचे जिसमें कई खास-खास आदमियों और आपस वालों के साथ महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह उनका इंतजार कर रहे थे। इस समय इस कमरे में यद्यपि राजा गोपालसिंह, नकाबपोश लोग, जीतसिंह, तेजसिंह, भूतनाथ और ऐयार लोग भी मौजूद थे मगर कोई आदमी ऐसा न था जिसके सामने भेद की बातें करने में किसी तरह का संकोच हो। दोनों कुमार इशारा पाकर अपने दादा साहब के बगल में बैठ गए और धीर-धीरे बातचीत होने लगी।

सुरेन्द्र - (दोनों कुमारों की तरफ देख के) भैरोसिंह और तारासिंह तुम्हारे पास गये हुए थे, उन दोनों को कहां छोड़ा?

इंद्रजीत - (मुस्कराते हुए) जी वे दोनों तो हम लोगों के आने के पहले ही से हुजूर में हाजिर हैं!

सुरेन्द्र - (ताज्जुब से चारों तरफ देख के) कहां?

महाराज के साथ ही साथ और लोगों ने भी ताज्जुब के साथ एक-दूसरे पर निगाह डाली।

इंद्रजीत - (दोनों सरदार नकाबपोशों की तरफ बताकर जिनके साथ और भी कई नकाबपोश थे) रामसिंह और लक्ष्मणसिंह का काम आज वे ही दोनों पूरा कर रहे हैं।

इतना सुनते ही दोनों नकाबपोशों ने अपने-अपने चेहरे पर से नकाब हटा दी और उनके बदले में भैरोसिंह तथा तारासिंह दिखाई देने लगे। इस जादू के से मामले को देखकर सभी की विचित्र अवस्था हो गई और सब ताज्जुब में आकर एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। भूतनाथ और देवीसिंह की तो और ही अवस्था हो रही थी। बड़े जोरों के साथ उनका कलेजा उछलने लगा और वे कुल बातें उन्हें याद आ गईं जो नकाबपोशों के मकान में जाकर देखी-सुनी थीं और वे दोनों ही ताज्जुब के साथ गौर करने लगे।

सुरेन्द्र - (दोनों कुमारों से) जब भैरोसिंह और तारासिंह तुम्हारे पास नहीं गये और यहां मौजूद थे तब भी तो रामसिंह और लक्ष्मणसिंह कई दफे आये थे, उस समय इस विचित्र पर्दे (नकाब) के अंदर कौन छिपा हुआ था?

इंद्रजीत - (और सब नकाबपोशों की तरफ बताकर) कई दफे इन लोगों में से बारी-बारी से समयानुसार और कई दफे स्वयं हम दोनों भाई इसी पोशाक और नकाब को पहिरकर हाजिर हुए थे।

कुंअर इंद्रजीतसिंह की इस बात ने इन लोगों को और भी ताज्जुब में डाल दिया और सब कोई हैरानी के साथ उनकी तरफ देखने लगे। और भूतनाथ और देवीसिंह की तो बात ही निराली थी, इनको तो विश्वास हो गया कि नकाबपोशों की टोह में जिस मकान के अंदर हम लोग गए थे उसके मालिक ये ही दोनों हैं, इन्हीं दोनों की मर्जी से हम लोग गिरफ्तार हुए थे, और इन्हीं दोनों के सामने पेश किए गए थे। देवीसिंह यद्यपि अपने दिल को बार-बार समझा-बुझाकर सम्हालते थे मगर इस बात का खयाल हो ही जाता था कि अपने ही लोगों ने मेरी बेइज्जती की और मेरे ही लड़के ने इस काम में शरीक होकर मेरे साथ दगा की। मगर देखना चाहिए, इन सब बातों का भेद सबब और नतीजा क्या खुलता है।

भूतनाथ इस सोच में घड़ी-घड़ी सिर झुका लेता था कि मेरे पुराने ऐब जिन्हें मैं बड़ी कोशिश से छिपा रहा था अब छिपे न रहे क्योंकि इन नकाबपोशों को मेरा रत्ती -रत्ती हाल मालूम है और दोनों कुमार इन सभों के मालिक और मुखिया हैं, अस्तु इनसे कोई बात छिपी न रह गई होगी। इसके अतिरिक्त मैं अपनी आंखों से देख चुका हूं कि मुझसे बदला लेने की नीयत रखने वाला मेरा दुश्मन उस विचित्र तस्वीर को लिए हुए इनके सामने हाजिर हुआ था और मेरा लड़का हरनामसिंह भी वहां मौजूद था। यद्यपि अब इस बात की आशा नहीं हो सकती कि यह दोनों कुमार मुझे जलील और बेआबरू करेंगे मगर फिर भी शर्मिंदगी मेरा पल्ला नहीं छोड़ती। इत्तिफाक की बात है कि जिस तरह मेरी स्त्री और लड़के ने इस मामले में शरीक होकर मुझे छकाया है उसी तरह देवीसिंह की स्त्री-लड़के ने उनके दिल में भी चुटकी ली है।

देवीसिंह और भूतनाथ की तरह हमारे और ऐयारों के दिल में भी करीब-करीब इसी ढंग की बातें पैदा हो रही थीं और इन सब भेदों को जानने के लिए वे बनिस्बत पहले के अब ज्यादे बेचैन हो रहे थे, तथा यही हाल हमारे महाराज गोपालसिंह वगैरह का भी था।

कुछ देर तक ताज्जुब के साथ सन्नाटा रहा और इसके बाद पुनः महाराज ने दोनों कुमारों की तरफ देखकर कहा -

सुरेन्द्र - ताज्जुब की बात है कि तुम दोनों भाई यहां आकर भी अपने को छिपाए रहे!!

इंद्रजीत - (हाथ जोड़कर) मैं यहां हाजिर होकर पहले ही अर्ज कर चुका था कि 'हम लोगों का भेद जानने के लिए उद्‌योग न किया जाय, हम लोग मौका पाकर स्वयं अपने को प्रकट कर देंगे' इसके अतिरिक्त तिलिस्मी नियमों के अनुसार तब तक हम दोनों भाई प्रकट नहीं हो सकते थे जब तक कि अपना काम पूरा करके इसी तिलिस्मी चबूतरे की राह से तिलिस्म के बाहर नहीं निकल आते। साथ ही इसके हम लोगों की यह भी इच्छा थी कि जब तक निश्चिंत होकर खुले तौर पर यहां न आ जायं तब तक कैदियों के मुकदमे का फैसला न होने पावे क्योंकि इस तिलिस्म के अंदर जाने के बाद हम लोगों को बहुत से नए भेद मालूम हुए हैं जो (नकाबपोशों की तरफ इशारा करके) इन लोगों से संबंध रखते हैं और जिनको आपसे अर्ज करना बहुत जरूरी था।

सुरेन्द्र - (मुस्कराते हुए और नकाबपोशों की तरफ देख के) अब तो इन लोगों को भी अपने चेहरों से नकाब उतार देना चाहिए, हम समझते हैं, इस समय इन लोगों का चेहरा साफ होगा।

कुंअर इंद्रजीतसिंह का इशारा पाकर उन नकाबपोशों ने भी अपने-अपने चेहरे से नकाब हटा दी और खड़े होकर अदब के साथ महाराज को सलाम किया। ये नकाबपोश गिनती में पांच थे और इन्हीं पांचों में इस समय वे दोनों सूरत भी दिखाई पड़ीं जो यहां दरबार में पहले दिखाई पड़ चुकी थीं या जिन्हें देखकर दारोगा और बेगम के छक्के छूट गए थे।

अब सभों का ध्यान उन पांचों नकाबपोशों की तरफ खिंच गया जिनका असल हाल जानने के लिए लोग पहले ही से बेचैन हो रहे थे क्योंकि इन्होंने कैदियों के मामले में कुछ विचित्र ढंग की कैफियत और उलझन पैदा कर दी थी। यद्‌यपि कह सकते हैं कि यहां पर इन पांचों को पहचानने वाला कोई न था मगर भूतनाथ और राजा गोपालसिंह बड़े गौर से उनकी तरफ देखकर अपने हाफजे (स्मरणशक्ति) पर जोर दे रहे थे और उम्मीद करते थे कि इन्हें हम पहचान लेंगे।

सुरेन्द्र - (गोपालसिंह की तरफ देख के) केवल हमीं लोग नहीं बल्कि हजारों आदमी इनका हाल जानने के लिए बेताब हो रहे हैं, अस्तु ऐसा करना चाहिए कि एक साथ ही इनका हाल मालूम हो जाय।

गोपाल - मेरी भी यही राय है।

एक नकाब - कैदियों के सामने ही हम लोगों का किस्सा सुना जाय तो ठीक हो क्योंकि ऐसा होने ही से महाराज का विचार पूरा होगा। इसके अतिरिक्त हम लोगों के किस्से में वही कैदी हामी भरेंगे और कई अधूरी बातों को पूरा करके महाराज का शक दूर करेंगे जिन्हें हम लोग नहीं जानते और जिनके लिए महाराज उत्सुक होंगे।

इंद्र - (सुरेन्द्रसिंह से) बेशक ऐसा ही है। यद्यपि हम दोनों भाई इन लोगों का किस्सा सुन चुके हैं मगर कई भेदों का पता नहीं लगा जिनके जाने बिना जी बेचैन हो रहा है और उनका मालूम होना कैदियों की इच्छा पर निर्भर है।

सुरेन्द्र - (कुछ सोचकर) खैर ऐसा ही किया जाएगा।

इसके बाद उन लोगों में दूसरे तरह की बातचीत होने लगी जिसके लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती। इसके घंटे भर बाद दरबार बर्खास्त हुआ और सब कोई अपने स्थान पर चले गए।

कुंअर इंद्रजीतसिंह का दिल किशोरी को देखने के लिए बेताब हो रहा था। उन्हें विश्वास था कि यहां पहुंचकर उससे अच्छी तरह मुलाकात होगी और बहुत दिनों का अरमान भरा दिल उसकी सोहबत से तस्कीन पाकर पुनः उनके कब्जे में आ जाएगा मगर ऐसा नहीं हुआ अर्थात् कुमार के आने के पहले ही वह अपने नाना के डेरे में भेज दी गई और उनका अरमान भरा दिल उसी तरह तड़पता रह गया। यद्यपि उन्हें इस बात का भी विश्वास था कि अब उनकी शादी किशोरी के साथ बहुत जल्दी होने वाली है मगर फिर भी उनका मनचला दिल जिसे उनके कब्जे के बाहर भये मुद्दत हो चुकी थी इन चापलूसियों को कब मानता था! इसी तरह कमलिनी से भी मीठी-मीठी बातें करने के लिए वे कम बेताब न थे मगर बड़ों का लेहाज उन्हें इस बात की इजाजत नहीं देता था कि उससे एकांत में मुलाकात करें यद्यपि ऐसा करते तो कोई हर्ज की बात न थी मगर इसलिए कि उसके साथ भी शादी होने की उम्मीद थी शर्म और लेहाज के फेर में पड़े हुए थे, परंतु कमलिनी को इस बात का सोच-विचार कुछ भी न था। हम इसका सबब भी बयान नहीं कर सकते, हां इतना कहेंगे कि जिस कमरे में कुंअर इंद्रजीतसिंह का डेरा था उसी के पीछे वाले कमरे में कमलिनी का डेरा

था और उस कमरे से कुंअर इंद्रजीतसिंह के कमरे में आने-जाने के लिए एक छोटा-सा दरवाजा भी था जो इस समय भीतर की तरफ से अर्थात् कमलिनी की तरफ से बंद था और कुमार को इस बात की कुछ भी खबर न थी।

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी थी। कुंअर इंद्रजीतसिंह अपने पलंग पर लेटे हुए किशोरी और कमलिनी के विषय में तरह-तरह की बातें सोच रहे थे। उनके पास कोई दूसरा आदमी न था और एक तरह का सन्नाटा छाया हुआ था। एकाएक पीछे वाले कमरे का (जिसमें कमलिनी का डेरा था) दरवाजा खुला और अंदर से एक लौंडी आती हुई दिखाई पड़ी।

कुमार ने चौंककर उसकी तरफ देखा और उसने हाथ जोड़कर अर्ज किया, "कमलिनीजी आपसे मिला चाहती हैं, आज्ञा हो तो स्वयं यहां आवें या आप ही वहां तक चलें।"

कुमार - वे कहां हैं?

लौंडी - (पिछले कमरे की तरफ बताकर) इसी कमरे में तो उनका डेरा है।

कुमार - (ताज्जुब से) इसी कमरे में! मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी। अच्छा मैं स्वयं चलता हूं, तू इस कमरे का दरवाजा बंद कर दे।

आज्ञा पाते ही लौंडी ने कुमार के कमरे का दरवाजा बंद कर दिया जिससे बाहर से कोई यकायक आ न जाय। इसके बाद इशारा पाकर लौंडी कमलिनी के कमरे की तरफ रवाना हुई और कुमार उसके पीछे-पीछे चले। चौखट के अंदर पैर रखते ही कुमार की निगाह कमलिनी पर पड़ी और वे भौंचक्के से होकर उसकी सूरत देखने लगे।

इस समय कमलिनी की सुंदरता बनिस्बत पहले के बहुत ही बढ़ी-चढ़ी देखने में आई। पहले जिन दिनों कुमार ने कमलिनी की सूरत देखी थी उन दिनों वह बिल्कुल उदासीन और मामूली ढंग पर रहा करती थी। मायारानी के झगड़े की बदौलत उसकी जान जोखिम में पड़ी हुई थी और इस कारण से उसके दिमाग को एक पल के लिए भी छुट्टी नहीं मिलती थी। इन्हीं सब कारणों से उसके शरीर और चेहरे की रौनक में भी बहुत बड़ा फर्क पड़ गया था तिस पर भी वह कुमार की सच्ची निगाह में ही दिखाई देती थी। फिर आज उसकी खुशी और खूबसूरती का क्या कहना है जबकि ईश्वर की कृपा से वह अपने तमाम दुश्मनों पर फतह पा चुकी है, तरद्दुदों के बोझ से

हलकी हो चुकी है और मनमानी उम्मीदों के साथ अपने को बनाने-संवारने का भी मुनासिब मौका उसे मिल गया है! यही सबब है कि इस समय वह रानियों की-सी पोशाक और सजावट में दिखाई देती है।

कमलिनी की इस समय की खूबसूरती ने कुमार पर बहुत बड़ा असर किया और बनिस्बत पहले के इस समय बहुत ज्यादे कुमार के दिल पर अपना अधिकार जमा लिया। कुमार को देखते ही कमलिनी ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। और कुमार ने आगे बढ़कर बड़े प्रेम से उसका हाथ पकड़कर पूछा, "कहो, अच्छी तो हो?'

"अब भी अच्छी न होऊंगी!" कहकर मुस्कराती हुई कमलिनी ने कुमार को ले जाकर एक ऊंची गद्दी पर बैठाया और आप भी उनके पास बैठकर यों बातचीत करने लगी।

कम - कहिए तिलिस्म के अंदर आपको किसी तरह की तकलीफ तो नहीं हुई!

इंद्र - ईश्वर की कृपा से हम लोग कुशलपूर्वक यहां तक चले आए और अब तुम्हें धन्यवाद देते हैं क्योंकि यह सब बातें तुम्हारी ही बदौलत नसीब हुई हैं। अगर तुम मदद न करतीं तो न मालूम हम लोगों की क्या दशा हुई होती! हमारे साथ तुमने जो कुछ उपकार किया है उसका बदला चुकाना मेरी सामर्थ्य के बाहर है। सिवाय इसके मैं क्या कह सकता हूं कि (अपनी छाती पर हाथ रख के) यह जान और शरीर तुम्हारा है।

कम - (मुस्कराकर) अब कृपा कर इन सब बातों को तो रहने दीजिए क्योंकि इस समय मैंने इसलिए आपको तकलीफ नहीं दी है कि अपनी बड़ाई सुनूं या आप पर अपना अधिकार जमाऊं।

इंद्र - अधिकार तो तुमने उसी दिन मुझ पर जमा लिया जिस दिन ऐयार के हाथ से मेरी जान बचाई और मुझसे तलवार की लड़ाई लड़कर यह दिखा दिया कि मैं तुमसे ताकत में कम नहीं हूं।

कम - (हंसकर) क्या खूब! मैं और आपका मुकाबला करूं!! आपने मुझे भी क्या कोई पहलवान समझ लिया है?

इंद्र - आखिर क्या बात थी जो उस दिन मैं तुमसे हार गया था।

कम - आपको उस बेहोशी की दवा ने कमजोर और खराब कर दिया था जो एक अनाड़ी ऐयार की बनाई हुई थी। उस समय केवल आपको चैतन्य करने के लिए मैं लड़ पड़ी थी नहीं तो कहां मैं और कहां आप!!

इंद्र - खैर ऐसा ही होगा मगर इसमें तो कोई शक नहीं कि तुमने मेरी जान बचाई, केवल उसी दफा नहीं बल्कि उसके बाद भी कई दफे।

कम - भया, भया, अब इन सब बातों को जाने दीजिए, मैं ऐसी बातें नहीं सुना चाहती। हां यह बतलाइए कि तिलिस्म के अंदर आपने क्या-क्या देखा और क्या-क्या किया?

इंद्र - मैं सब हाल तुमसे कहूंगा बल्कि उन नकाबपोशों को कैफियत भी तुमसे बयान करूंगा जो मुझे तिलिस्म के अंदर मिले और जिनका हाल अभी तक मैंने किसी से बयान नहीं किया, मगर तुम यह सब हाल अपनी जुबान से किसी से न कहना।

कम - बहुत खूब।

इसके बाद कुंअर इंद्रजीतसिंह ने अपना कुल हाल कमलिनी से बयान किया और कमलिनी ने भी अपना पिछला किस्सा और उसी के साथ-साथ भूतनाथ, नानक तथा तारा वगैरह का हाल बयान किया जो कुमार को मालूम न था, इसके बाद पुनः उन दोनों में यों बातचीत होने लगी -

इंद्र - आज तुम्हारी जुबानी बहुत-सी ऐसी बातें मालूम हुई हैं जिनके विषय में मैं कुछ भी नहीं जानता था।

कम - इस तरह आपकी जुबानी उन नकाबपोशों का हाल सुनकर मेरी अजीब हालत हो रही है, क्या करूं आपने मना कर दिया है कि किसी से इस बात का जिक्र न करना नहीं तो अपने सुयोग्य पति से उनके विषय में...।

इंद्र - (चौंककर) क्या तुम्हारी शादी हो गई?

कम - (कुमार के चेहरे का रंग उड़ा हुआ देख मुस्कराकर) मैं अपने उस तालाब वाले मकान में अर्ज कर चुकी थी कि मेरी शादी बहुत जल्द होने वाली है।

इंद्र - (लंबी सांस लेकर) हां मुझे याद है, मगर यह उम्मीद न थी कि वह इतनी जल्दी हो जायगी।

कम - तो क्या आप मुझे हमेशा कुंआरी ही देखना पसंद करते थे?

इंद्र - नहीं ऐसा तो नहीं है, मगर...।

कम - मगर क्या कहिए कहिए, रुके क्यों?

इंद्र - यही कि मुझसे पूछ तो लिया होता।

कम - क्या खूब! आपने क्या मुझसे पूछकर इंद्रानी के साथ शादी की थी जो मैं आपसे पूछ लेती।

इतना कहकर कमलिनी हंस पड़ी और कुमार ने शरमाकर सिर झुका लिया मगर इस समय कुमार के चेहरे से मालूम होता था कि उन्हें हद दर्जे का रंज है और कलेजे में बेहिसाब तकलीफ हो रही है।

कुमार - (कमलिनी के पास से कुछ खिसककर) मुझे विश्वास था कि जन्म भर तुमसे हंसने-बोलने का मौका मिलेगा।

कम - मेरे दिल में भी यही बात बैठी हुई थी और यही तै कर मैंने शादी की है कि आपसे कभी अलग होने की नौबत न आवे। मगर आप हट क्यों गये आइए-आइए जिस जगह बैठे थे बैठिए।

कुमार - नहीं-नहीं, पराई स्त्री के साथ एकांत में बैठना ही धर्म के विरुद्ध है न कि साथ सटकर, मगर आश्चर्य है कि तुम्हें इस बात का कुछ भी खयाल नहीं है! मुझे विश्वास था कि तुमसे कभी कोई काम धर्म के विरुद्ध न हो सकेगा।

कम - मुझमें आपने कौन-सी बात धर्म-विरुद्ध पाई?

कुमार - यही कि तुम इस तरह एकांत में बैठकर मुझसे बातें कर रही हो, इससे भी बढ़कर वह बात जो अभी तुमने अपनी जुबान से कबूल की है कि 'तुमसे कभी अलग न होऊंगी'। क्या यह धर्म-विरुद्ध नहीं है क्या तुम्हारा पति इस बात को जानकर भी तुम्हें पतिव्रता कहेगा?

कम - कहेगा और जरूर कहेगा, अगर न कहेगा तो इसमें उसकी भूल है। उसे निश्चय है और आप सच समझिए कि कमलिनी प्राण दे देना स्वीकार करेगी परंतु धर्म-विरुद्ध पथ पर चलना कदापि नहीं, आपको मेरी नीयत पर ध्यान देना चाहिए दिल्लगी के कामों पर नहीं, क्योंकि मैं ऐयारा भी हूं। यदि मेरा पति इस समय यहां

आ जाय तो आपको मालूम हो जाय कि मुझ पर वह जरा भी शक नहीं करता और मेरा इस तरह बैठना उसे कुछ भी नहीं गढ़ाता।

कुमार - (कुछ सोचकर) ताज्जुब है!!

कम - अभी क्या, आपको और भी ताज्जुब होगा।

इतना कहकर कमलिनी ने कुमार की कलाई पकड़ ली और अपनी तरफ खींचकर कहा, "पहले आप अपनी जगह पर आकर बैठ जाइये तो मुझसे बात कीजिए।"

कुमार - नहीं-नहीं, कमलिनी, तुम्हें ऐसा उचित नहीं है। दुनिया में धर्म से बढ़कर और कोई वस्तु नहीं है एतएव तुम्हें भी धर्म पर ध्यान रखना चाहिए, अब तुम स्वतंत्र नहीं हो पराये की स्त्री हो।

कम - यह सच है परंतु मैं आपसे पूछती हूं कि यदि मेरी शादी आपके साथ होती तो क्या मैं आनंदसिंह से हंसने, बोलने या दिल्लगी करने लायक न रहती?

कुमार - बेशक उस हालत में तुम आनंद से हंस-बोल और दिल्लगी भी कर सकती थीं क्योंकि यह बात हम लोगों में लौकिक व्यवहार के ढंग पर प्रचलित है।

कम - बस तो मैं आपसे भी उसी तरह हंस-बोल सकती हूं। और ऐसा करने के लिए मेरे पति ने मुझे आज्ञा भी दे दी है, मैं उनका पत्र आपको दिखा सकती हूं इसलिए कि मेरा और आपका नाता ऐसा ही है, एक नहीं बल्कि तीन-तीन नाते हैं।

इंद्र - सो कैसे?

कम - सुनिए मैं कहती हूं। एक तो मैं किशोरी को अपनी बहिन समझती हूं, अतएव आप मेरे बहनोई हुए, कहिए हां।

कुमार - यह कोई बात नहीं है, क्योंकि अभी किशोरी की शादी मेरे साथ नहीं हुई है।

कम - खैर जाने दीजिए मैं दूसरा और तीसरा नाता बताती हूं। जिनके साथ मेरी शादी हुई है वे राजा गोपालसिंह के भाई हैं, इसके अतिरिक्त लक्ष्मीदेवी की मैं छोटी बहिन हू अतएव आपकी साली भी हुई।

कुमार - (कुछ सोचकर) हां इस बात से तो मैं कायल हुआ मगर तुम्हारी नीयत में किसी तरह फर्क न आना चाहिए।

कम - इससे आप बेफिक्र रहिए, मैं अपना धर्म किसी तरह नहीं बिगाड़ सकती और न दुनिया में कोई ऐसा पैदा हुआ है जो मेरी नीयत बिगाड़ सके। आइए अपने ठिकाने पर बैठ जाइए।

लाचार कुंअर इंद्रजीतसिंह अपने ठिकाने पर बैठे और पुनः बातचीत करने लगे मगर उदास बहुत थे और यह बात उनके चेहरे से जाहिर होती थी।

यकायक कमलिनी ने मसखरेपन के साथ हंस दिया जिससे कुमार को खयाल हो गया कि इसने जो कुछ कहा सब झूठ और केवल दिल्लगी के लिए था मगर साथ ही इसके उनके दिल का खुटका साफ नहीं हुआ।

कम - अच्छा आप यह बताइये कि तिलिस्म की कैफियत देखने के लिए राजा साहब तिलिस्म के अंदर जायेंगे या नहीं?

कुमार - जरूर जायेंगे।

कम - कब?

कुमार - सो मैं ठीक नहीं कह सकता शायद कल या परसों ही जायं, कहते थे कि 'तिलिस्म के अंदर चलकर देखने का इरादा है।' इसके जवाब में भाई गोपालसिंह ने कहा कि 'जरूर और जल्द चलकर देखना चाहिए।'

कम - तो क्या हम लोगों को साथ ले जायेंगे?

कुमार - सो मैं कैसे कहूं तुम गोपाल भाई से कहो वह इसका बंदोबस्त जरूर कर देंगे, मुझे तो कुछ कहते शर्म मालूम होगी।

कम - सो तो ठीक है, अच्छा मैं कल उनसे कहूंगी।

कुमार - मगर तुम लोगों के साथ किशोरी भी अगर तिलिस्म के अंदर जाकर वहां की कैफियत न देखेगी तो मुझे इस बात का रंज जरूर होगा।

कम - बात तो वाजिब है मगर वह इस मकान में तभी आवेंगी जब उनकी शादी आपके साथ हो जायगी और इसीलिए वह अपने नाना के डेरे में भेज दी गई हैं। खैर तो आप इस मामले को तब तक के लिए टाल दीजिए जब तक आपकी शादी न हो जाय।

कुमार - मैं भी यही उचित समझता हूं अगर महाराज मान जायं तो।

कम - या आप हम लोगों को फिर दूसरी दफे ले जाइयेगा।

कुमार - हां यह भी हो सकता है। अबकी दफे का वहां जाना महाराज की इच्छा पर ही छोड़ देना चाहिए, वे जिसे चाहें ले जायं।

कम - बेशक ऐसा ही ठीक होगा। अब तिलिस्म के अंदर जाने में आपत्ति ही काहे की है, जब और जै दफे आप चाहेंगे हम लोगों को ले जायेंगे।

कुमार - नहीं सो बात ठीक नहीं, बहुत-सी जगह ऐसी हैं जहां सैकड़ों दफे जाने में भी कोई हर्ज नहीं है मगर बहुत-सी जगहें तिलिस्म के टूट जाने पर भी नाजुक हालत में बनी हुई हैं और जहां बार-बार जाना कठिन है तथापि मैं तुम लोगों को वहां की सैर जरूर कराऊंगा।

कम - मैं समझती हूं कि मेरे उस तालाब वाले तिलिस्मी मकान के नीचे भी कोई तिलिस्म जरूर है। उस खून से लिखी हुई तिलिस्मी किताब का मजमून पूरी तरह से मेरी समझ में नहीं आता था तथापि इस ढंग की बातों पर कुछ शक जरूर होता था।

कुमार - तुम्हारा खयाल बहुत ठीक है, हम दोनों भाइयों को खून से लिखी उस तिलिस्मी किताब के पढ़ने से बहुत ज्यादे हाल मालूम हुआ है, इसके अतिरिक्त मुझे तुम्हारा वह स्थान पसंद भी है और पहले भी मैं (जब तुम्हारे पास वहां था) यह विचार कर चुका था कि 'सब कामों से निश्चिंत होकर कुछ दिनों के लिए यहां जरूर डेरा जमाऊंगा' परंतु अब मेरा वह विचार कुछ काम नहीं दे सकता।

कम - सो क्यों?

कुमार - इसलिए कि अगर तुम्हारी बातें ठीक हैं तो अब वह स्थान तुम्हारे पति के अधिकार में होगा।

कम - (मुस्कराकर) तो क्या हर्ज है, मैं उनसे कहकर आपको दिला दूंगी।

कुमार - मैं किसी से भीख मांगना पसंद नहीं करता और न उनसे लड़कर वह स्थान छीन लेना ही मुझे मंजूर होगा। कमलिनी सच तो यों है कि तुमने मुझे धोखा दिया और बहुत बड़ा धोखा दिया। मुझे तुमसे यह उम्मीद न थी। (कुछ सोचकर) एक दफे तुम मुझसे फिर कह दो कि सचमुच तुम्हारी शादी हो गई है।

इसके जवाब में कमलिनी खिलखिलाकर हंस पड़ी और बोली, "हां हो गई।"

कुमार - मेरे सिर पर हाथ रखकर कसम खाओ।

कम - (कुमार के पैरों पर हाथ रखकर) आपसे मैं कसम खाकर कहती हूं कि मेरी शादी हो गई।

हम लिख नहीं सकते कि इस समय कुमार के दिल की कैसी बुरी हालत थी, रंज और अफसोस से उनका दिल बैठा जाता था और कमलिनी हंस-हंसकर चुटकियां लेती थी। बड़ी मुश्किल से कुमार थोड़ी देर और उसके पास बैठे। फिर उठकर लंबी सांस लेते हुए अपने कमरे में चले गए। रात भर उन्हें नींद न आई।

बयान - 5

महाराज की आज्ञानुसार कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह के विवाह की तैयारी बड़ी धूमधाम से हो रही है। यहां से चुनार तक की सड़कें दोनों तरफ जाफरी (पीले फूल) वाली टट्टियों से सजाई गई हैं जिन पर रोशनी की जायगी और जिनके बीच में थोड़ी-थोड़ी दूर पर बड़े फाटक बने हुए हैं और उन पर नोबतखाने का इंतजाम किया गया है। टट्टियों के दोनों तरफ बाजार बसाया जायगा जिसकी तैयारी कारिंदे लोग बड़ी खूबी और मुस्तैदी के साथ कर रहे हैं। इसी तरह और भी तरह-तरह के तमाशों का इंतजाम बीच-बीच में हो रहा है जिसके सबब से बहुत ज्यादे भीड़भाड़ होने की उम्मीद है और अभी से तमाशबीनों का जमावड़ा हो रहा है। रोशनी के साथ-साथ आतिशबाजी के इंतजाम में भी बड़ी सरगर्मी दिखाई जा रही है। कोशिश हो रही है कि उम्दी से उम्दी तथा अनूठी आतिशबाजी का तमाशा लोगों को दिखाया जाय। इसी तरह और भी कई तरह के खेल-तमाशे और नाच इत्यादि का बंदोबस्त हो रहा है मगर इस समय हमें इन सब बातों से कोई मतलब नहीं है क्योंकि हम अपने पाठकों को उस तिलिस्मी मकान की तरफ ले चलना चाहते हैं जहां भूतनाथ और देवीसिंह ने नकाबपोशों के फेर में पड़कर शर्मिन्दगी उठाई थी और जहां इस समय दोनों कुमार अपने दादा, पिता तथा और सब आपस वालों को तिलिस्मी तमाशा दिखाने के लिए ले जा रहे हैं।

सुबह का सुहावना समय है और ठंडी हवा चल रही है। जंगली फूलों की खुशबू से मस्त भई सुंदर-सुंदर रंग-बिरंगी खूबसूरत चिड़ियाएं हमारे सर्वगुण संपन्न मुसाफिरों को मुबारकबाद दे रही हैं जो तिलिस्म की सैर करने की नीयत से मीठी-मीठी बातें करते हुए जा रहे हैं।

घोड़े पर सवार महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, गोपालसिंह, इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह तथा पैदल तेजसिंह, देवीसिंह, भूतनाथ, पंडित बद्रीनाथ, रामनारायण, पन्नालाल वगैरह अपने ऐयार लोग जा रहे थे। तिलिस्म के अंदर मिले कैदी अर्थात् नकाबपोश लोग तथा भैरोसिंह और तारासिंह इस समय साथ न थे। इस समय देवीसिंह से ज्यादे भूतनाथ का कलेजा उछल रहा था और वह अपनी स्त्री का असली भेद जानने के लिए बेताब हो रहा था। जब से उसे इस बात का पता चला कि वे दोनों सरदार नकाबपोश यही दोनों कुमार हैं तथा उस विचित्र मकान के मालिक भी यही हैं तब से उसके दिल का खुटका कुछ कम तो हो गया मगर खुलासा हाल जानने और पूछने का मौका न मिलने के सबब उसकी बेचैनी दूर नहीं हुई थी। वह यह भी जानता था कि अब उसकी स्त्री का लड़का हरनामसिंह किस फिक्र में है। इस समय जब वह फिर उसी ठिकाने जा रहा था जहां अपनी स्त्री की बदौलत गिरफ्तार होकर अपने लड़के का विचित्र हाल देखा था तब उसका दिल और बेचैन हो उठा, मगर साथ ही इसके उसे इस बात की भी उम्मीद हो रही थी कि अब उसे उसकी स्त्री का हाल मालूम हो जायगा या कुछ पूछने का मौका ही मिलेगा।

ये लोग धीरे-धीरे बातचीत करते हुए उसी खोह या सुरंग की तरफ जा रहे थे। पहर भर से ज्यादे दिन न चढ़ा होगा जब ये लोग उस ठिकाने पहुंच गए। महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह वगैरह घोड़े से नीचे उतर पड़े, साईसों ने घोड़े थाम लिए और इसके बाद उन सभों ने सुरंग के अंदर पैर रखा। इस सुरंग वाले रास्ते का कुछ खुलासा हाल हम इस संतति के उन्नीसवें भाग में लिख आए हैं जब भूतनाथ यहां आया था, अब पुनः दोहराने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती, हां इतना लिख देना जरूरी जान पड़ता है कि दोनों कुमारों ने सभों को यह बात समझा दी कि यह रास्ता बंद क्योंकर हो सकता है। बंद होने का स्थान वही चबूतरा था जो सुरंग के बीच में पड़ता था।

जिस समय ये लोग सुरंग तै करके मैदान में पहुंचे, सामने वही छोटा बंगला दिखाई दिया जिसका हाल हम पहले लिख चुके हैं। इस समय उस बंगले के आगे वाले दालान में दो नकाबपोश औरतें हाथ में तीरकमान लिए टहलती पहरा दे रही थीं जिन्हें देखते ही खास करके भूतनाथ और देवीसिंह को बड़ा ताज्जुब हुआ और उनके दिल में तरह-तरह की बातें पैदा होने लगीं। भूतनाथ का इशारा पाकर देवीसिंह ने कुंअर इंद्रजीतसिंह से पूछा, "ये दोनों नकाबपोश औरतें कौन हैं जो पहरा दे रही हैं' इसके जवाब में कुमार तो चुप रह गए मगर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने कहा, "इसके

जानने की तुम लोगों को क्या जल्दी पड़ी हुई है जो कोई होंगी सब मालूम ही हो जायगा!"

इस जवाब ने देवीसिंह और भूतनाथ को देर तक के लिए चुप कर दिया और विश्वास दिला दिया कि महाराज को इसका हाल जरूर मालूम है।

जब उन औरतों ने इन सभों को पहचाना और अपनी तरफ आते देखा तो जंगले के अंदर घुसकर गायब हो गईं, तब तक ये लोग भी उस दालान में जा पहुंचे। इस समय भी यह बंगला उसी हालत में था जैसा कि भूतनाथ और देवीसिंह ने देखा था।

हम पहले लिख चुके हैं और अब भी लिखते हैं कि यह बंगला जैसा बाहर से सादा और साधारण मालूम होता था वैसा अंदर से न था और यह बात दालान में पहुंचने के साथ ही सभों को मालूम हो गई। दालान और दीवारों में निहायत खूबसूरत और आला दर्जे की कारीगरी का नमूना दिखाने वाली तस्वीरों को देखकर सब कोई दंग हो गये और मुसव्वर के हाथों की तारीफ करने लगे। ये तस्वीरें एक निहायत आलीशान इमारत की थीं और उसके ऊपर बड़े-बड़े हरफों में यह लिखा हुआ था -

"यह तिलिस्म चुनारगढ़ के पास ही एक निहायत खूबसूरत जंगल में कायम किया गया है जिसे महाराज सुरेन्द्रसिंह के लड़के वीरेन्द्रसिंह तोड़ेंगे।"

इस तस्वीर को देखते ही सभों को विश्वास हो गया कि वह तिलिस्मी खंडहर जिसमें तिलिस्मी बगुला था और जिस पर इस समय निहायत आलीशान इमारत बनी हुई है पहले इसी सूरत-शक्ल में था, जिसे जमाने के हेर-फेर ने अच्छी तरह बर्बाद करके उजाड़ और भयानक बना दिया। इमारत की उस बड़ी और पूरी तस्वीर के नीचे उसके भीतर वाले छोटे-छोटे टुकड़े भी बनाकर दिखलाए गए थे और उस बगुले की तस्वीर भी बनी हुई थी जिसे राजा वीरेन्द्रसिंह ने बखूबी पहचान लिया और कहा, "बेशक अपने जमाने में यह बहुत अच्छी इमारत थी।"

सुरेन्द्र - यद्यपि आजकल जो इमारत तिलिस्मी खंडहर पर बनी है और जिसके बनवाने में जीतसिंह ने अपनी तबियतदारी और कारीगरी का अच्छा नमूना दिखाया है बुरी नहीं है, मगर हमें इस पहली इमारत का ढंग कुछ अनूठा और सुंदर मालूम पड़ता है।

जीत - बेशक ऐसा ही है। यदि इस तस्वीर को मैं पहले देखे हुए होता तो जरूर इसी ढंग की इमारत बनवाता।

वीरेन्द्र - और ऐसा होने से वह तिलिस्म एक दफे नया मालूम पड़ता।

इंद्र - यह चुनारगढ़ वाला तिलिस्म साधारण नहीं बल्कि बहुत बड़ा है। चुनारगढ़, नौगढ़, विजयगढ़ और जमानिया तक इसकी शाखा फैली हुई है। इस बंगले को इस बहुत बड़े और फैले हुए तिलिस्म का 'केंद्र' समझना चाहिए बल्कि ऐसा भी कह सकते हैं कि यह बंगला तिलिस्म का नमूना है।

थोड़ी देर तक दालान में खड़े इसी किस्म की बातें होती रहीं और इसके बाद सभों को साथ लिए हुए दोनों कुमार बंगले के अंदर रवाना हुए।

सदर दरवाजे का पर्दा उठाकर अंदर जाते ही ये लोग एक गोल कमरे में पहुंचे जो भूतनाथ और देवीसिंह का देखा हुआ था। इस गोल और गुम्बजदार खूबसूरत कमरे की दीवारों पर जंगल, पहाड़ और रोहतासगढ़ की तस्वीरें बनी हुई थीं। घड़ी-घड़ी तारीफ न करके एक ही दफे लिख देना ठीक होगा कि इस बंगले में जितनी तस्वीरें देखने में आईं सभी आला दर्जे की कारीगरी का नमूना थीं और यही मालूम होता था कि आज ही बनकर तैयार हुई हैं। इस रोहतासगढ़ की तस्वीर को देखकर सब कोई बड़े प्रसन्न हुए और राजा वीरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह की तरफ देखकर कहा, "रोहतासगढ़ किले और पहाड़ी की बहुत ठीक और साफ तस्वीर बनी हुई है।"

तेज - जंगल भी उसी ढंग का बना हुआ है, कहीं-कहीं से ही फर्क मालूम पड़ता है, नहीं तो बाज जगहें तो ऐसी बनी हुई हैं जैसी मैंने अपनी आंखों से देखी हैं। (उंगली का इशारा करके) देखिए यह वह कब्रिस्तान है जिस राह से हम लोग रोहतासगढ़ के तहखाने में घुसे थे। हां यह देखिए बारीक हरफों में लिखा हुआ भी है - "तहखाने में जाने का बाहरी फाटक।"

इंद्र - इस तस्वीर को अगर गौर से देखेंगे तो वहां का बहुत ज्यादे हाल मालूम होगा। जिस जमाने में यह इमारत तैयार हुई थी उस जमाने में वहां की और उसके चारों तरफ की जैसी अवस्था थी वैसी ही इस तस्वीर में दिखाई है, आज चाहे कुछ फर्क पड़ गया हो!

तेज - बेशक ऐसा ही है।

इंद्र - इसके अतिरिक्त एक और ताज्जुब की बात अर्ज करूंगा।

वीरेन्द्र - वह क्या?

इंद्र - इसी दीवार में से वहां (रोहतासगढ़) जाने का रास्ता भी है!

सुरेन्द्र - वाह-वाह! क्या तुम इस रास्ते को खोल भी सकते हो?

इंद्र - जी हां, हम लोग इसमें बहुत दूर तक जाकर घूम आये हैं।

सुरेन्द्र - यह भेद तुम्हें क्योंकर मालूम हुआ?

इंद्र - उसी 'रक्तग्रंथ' की बदौलत हम दोनों भाइयों को इन सब जगहों का हाल और भेद पूरा-पूरा मालूम हो चुका है। यदि आज्ञा हो तो दरवाजा खोलकर मैं आपको रोहतासगढ़ के तहखाने में ले जा सकता हूं। वहां के तहखाने में भी एक छोटा-सा तिलिस्म है जो इसी बड़े तिलिस्म से संबंध रखता है और हम लोग उसे खोल या तोड़ भी सकते हैं परंतु अभी तक ऐसा करने का इरादा नहीं किया।

सुरेन्द्र - उस रोहतासगढ़ वाले तिलिस्म के अंदर क्या चीज है

इंद्र - उसमें केवल अनूठे अद्भुत आश्चर्य गुण वाले हरबे रखे हुए हैं, उन्हीं हरबों पर वह तिलिस्म बंधा है। जैसा तिलिस्मी खंजर हम लोगों के पास है या जैसे तिलिस्मी जिरःबख्तर और हरबों की बदौलत राजा गोपालसिंह ने कृष्णाजिन्न का रूप धरा था वैसे हरबों और असबाबों का तो वहां ढेर लगा हुआ है, हां खजाना वहां कुछ भी नहीं है।

सुरेन्द्र - ऐसे अनूठे हरबे खजाने से क्या कम हैं?

जीत - बेशक! (इंद्रजीत से) जिस हिस्से को तुम दोनों भाइयों ने तोड़ा है उसमें भी तो ऐसे अनूठे हरबे होंगे?

इंद्र - जी हां मगर बहुत कम हैं।

वीरेन्द्र - अच्छा यदि ईश्वर की कृपा हुई तो फिर किसी मौके पर इस रास्ते से रोहतासगढ़ जाने का इरादा करेंगे। (मकान की सजावट और परदों की तरफ देखकर) क्या यह सब सामान कन्दील, पर्दे और बिछावन वगैरह तुम लोग तिलिस्म के अंदर से लाये थे?

इंद्र - जी नहीं, जब हम लोग यहां आए तो इस बंगले को इसी तरह सजा-सजाया पाया और तीन-चार आदमियों को भी देखा जो इस बंगले की हिफाजत और मेरे आने का इंतजार कर रहे थे।

सुरेन्द्र - (ताज्जुब से) वे लोग कौन थे और अब कहां हैं?

इंद्र - दरियाफ्त करने पर मालूम हुआ कि वे लोग इंद्रदेव के मुलाजिम थे जो इस समय अपने मालिक के पास चले गये हैं। इस तिलिस्म का दारोगा असल में इंद्रदेव है, और आज के पहले भी इसी के बुजुर्ग लोग दारोगा होते आये हैं।

सुरेन्द्र - यह तुमने बड़ी खुशी की बात सुनाई, मगर अफसोस यह है कि इंद्रदेव ने हमें इन बातों की कुछ भी खबर न की।

आनंद - अगर इंद्रदेव ने इन सब बातों को आपसे छिपाया तो यह कोई ताज्जुब की बात नहीं है, तिलिस्मी कायदे के मुताबिक ऐसा होना ही चाहिए था।

सुरेन्द्र - ठीक है, तो मालूम होता है कि यह सब सामान तुम्हारी खातिरदारी के लिए इंद्रदेव की आज्ञानुसार किया गया है।

आनंद - जी हां, उसके आदमियों की जुबानी मैंने भी यही सुना है।

इसके बाद बड़ी देर तक ये लोग इन तस्वीरों को देखते और ताज्जुब भरी बातें करते रहे और फिर आगे की तरफ बढ़े। जब पहले भूतनाथ और देवीसिंह यहां आए थे तब हम लिख चुके हैं कि इस कमरे में सदर दरवाजे के अतिरिक्त और भी तीन दरवाजे थे - इत्यादि। अस्तु उन दोनों ऐयारों की तरह इस समय भी सभों को साथ लिए हुए दोनों कुमार दाहिनी तरफ वाले दरवाजे के अंदर गये और घूमते हुए उसी तरह बड़े और आलीशान कमरे में पहुंचे जिसमें पहले भूतनाथ और देवीसिंह ने पहुंचकर आश्चर्य का तमाशा देखा था।

इस आलीशान कमरे की तस्वीरें खूबी और खूबसूरती में सब तस्वीरों से बढ़ी-चढ़ी थीं तथा दीवारों पर जंगल, मैदान, पहाड़, खोह, दर्रे, झरने, शिकारगाह तथा शहरपनाह, किले, मोर्चे और लड़ाई इत्यादि की तस्वीरें लगी हुई थीं जिन्हें सब कोई गौर और ताज्जुब के साथ देखने लगे।

सुरेन्द्र - (एक किले की तरफ इशारा करके) यह तो चुनारगढ़ की तस्वीर है।

इंद्रजीत - जी हां, (उंगली का इशारा करके) और यह जमानिया के किले तथा खास बाग की तस्वीर है। इसी दीवार में से वहां जाने का भी रास्ता है। महाराज सूर्यकान्त के जमाने में उनके शिकारगाह और जंगल की यह सूरत थी।

वीरेन्द्र - और यह लड़ाई की तस्वीर कैसी है इसका क्या मतलब है?

इंद्रजीत - इन तस्वीरों में बड़ी कारीगरी खर्च की गई है। महाराज सूर्यकांत ने अपनी फौज को जिस तरह की कवायद और व्यूह-रचना इत्यादि का ढंग सिखाया था वे सब बातें इन तस्वीरों में भरी हुई हैं। तरकीब करने से ये सब तस्वीरें चलती-फिरती और काम करती नजर आएंगी और साथ ही इसके फौजी बाजा भी बजता हुआ सुनाई देगा अर्थात् इन तस्वीरों में जितने बाजे वाले हैं वे सब भी अपना-अपना काम करते हुए मालूम पड़ेंगे। परंतु इस तमाशे का आनंद रात को मालूम पड़ेगा दिन को नहीं। इन्हीं तस्वीरों के कारण इस कमरे का नाम 'व्यूह-मंडल' रखा गया है, वह देखिए ऊपर की तरफ बड़े हरफों में लिखा हुआ है।

सुरेन्द्र - यह बहुत अच्छी कारीगरी है। इस तमाशे को हम जरूर देखेंगे बल्कि और भी कई आदमियों को दिखाएंगे।

इंद्र - बहुत अच्छा, रात हो जाने पर मैं इसका बंदोबस्त करूंगा, तब तक आप और चीजों को देखें।

ये लोग जिस दरवाजे से इस कमरे में आये थे उसके अतिरिक्त एक दरवाजा और भी था जिस राह से सभों को लिए दोनों कुमार दूसरे कमरे में पहुंचे। इस कमरे की दीवार बिल्कुल साफ थी अर्थात् उस पर किसी तरह की तस्वीर बनी हुई न थी। कमरे के बीचों-बीच दो चबूतरे संगमर्मर के बने हुए थे जिनमें एक खाली था और दूसरे चबूतरे के ऊपर सफेद पत्थर की एक खूबसूरत पुतली बैठी हुई थी। इस जगह पर ठहरकर कुंअर इंद्रजीतसिंह ने अपने दादा और पिता की तरफ देखा और कहा, "नकाबपोशों की जुबानी हम लोगों का तिलिस्मी हाल जो कुछ आपने सुना है वह तो याद ही होगा, अस्तु हम लोग पहली दफे तिलिस्म से बाहर निकलकर जिस सुहावनी घाटी में पहुंचे थे वह यही स्थान है इसी चबूतरे के अंदर से हम लोग बाहर हुए थे। उस 'रक्तग्रंथ' की बदौलत हम दोनों भाई यहां तक तो पहुंच गए मगर उसके बाद इस चबूतरे वाले तिलिस्म को खोल न सके, हां इतना जरूर है कि उस 'रक्तग्रंथ' की बदौलत इस चबूतरे में से (जिस पर एक पुतली बैठी हुई थी उसकी तरफ इशारा करके) एक दूसरी किताब हाथ लगी जिसकी बदौलत हम लोगों ने इस चबूतरे वाले तिलिस्म को खोला और उसी राह से आपकी सेवा में जा पहुंचे।

आप सुन चुके हैं कि जब हम दोनों भाई राजा गोपालसिंह को मायारानी की कैद से छुड़ाकर जमानिया के खास बाग वाले देवमंदिर में गये थे तब वहां पहले आनंदसिंह

तिलिस्म के फंदे में फंस गये थे, उन्हें छुड़ाने के लिए जब मैं भी उसी गड्ढे या कुएं में कूद पड़ा तो चलता-चलता एक दूसरे बाग में पहुंचा जिसके बीचों-बीच में एक मंदिर था। उस मंदिर वाले तिलिस्म को जब मैंने तोड़ा तो वहां एक पुतली के अंदर कोई चमकती हुई चीज मुझे मिली।"

वीरेन्द्र - हां हमें याद है, उस मूरत को तुमने उखाड़कर किसी कोठरी के अंदर फेंक दिया था और वह फूटकर चूने की कली की तरह हो गई थी। उसी के पेट में से...।

इंद्र - जी हां!

सुरेन्द्र - तो वह चमकती हुई चीज क्या थी और वह कहां है?

इंद्र - वह हीरे की बनी हुई एक चाभी थी जो अभी तक मेरे पास मौजूद है, (जेब में से निकालकर महाराज को दिखाकर) देखिये यही ताली इस पुतली के पेट में लगती है।

सभों ने उस चाभी को गौर से देखा और इंद्रजीतसिंह ने सभों के देखते-देखते उस चबूतरे पर बैठी हुई पुतली की नाभी में वह ताली लगाई। उसका पेट छोटी अलमारी के पल्ले की तरह खुल गया।

इंद्र - बस इसी में से वह किताब मेरे हाथ लगी जिसकी बदौलत वह चबूतरे वाला तिलिस्म खोला।

सुरेन्द्र - अब वह किताब कहां है?

इंद्र - आनंदसिंह के पास मौजूद है।

इतना कहकर इंद्रजीतसिंह ने आनंदसिंह की तरफ देखा और उन्होंने एक छोटी-सी किताब जिसके अक्षर बहुत बारीक थे महाराज के हाथ में दे दी। किताब भोजपत्र की थी जिसे महाराज ने बड़े गौर से देखा और दो-तीन जगहों से कुछ पढ़कर आनंदसिंह के हाथ में देते हुए कहा, "इसे निश्चिंती में एक दफे पढ़ेंगे।"

इंद्र - यह पुतली वाला चबूतरा उस तिलिस्म में घुसने का दरवाजा है।

इतना कहकर इंद्रजीतसिंह ने उस पुतली के पेट में (जो खुल गया था) हाथ डाल के कोई पेंच घुमाया जिससे चबूतरे के दाहिने तरफ वाली दीवार किवाड़ के पल्ले की तरह धीरे-धीरे खुलकर जमीन के साथ सट गई और नीचे उतरने के लिए सीढ़ियां दिखाई देने लगीं। इंद्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर हाथ में लिया और उसका कब्जा

दबाकर रोशनी करते हुए चबूतरे के अंदर घुसे तथा सभों को अपने पीछे आने के लिए कहा। सभों के पीछे आनंदसिंह तिलिस्मी खंजर की रोशनी करते हुए चबूतरे के अंदर घुसे। लगभग पंद्रह-बीस चक्करदार सीढ़ियों से नीचे उतरने के बाद ये लोग एक बहुत बड़े कमरे में पहुंचे जिसमें सोने-चांदी के सैकड़ों बड़े-बड़े हण्डे, अशर्फियों और जवाहिरात से भरे पड़े हुए थे जिसे सभों ने बड़े गौर और ताज्जुब के साथ देखा और महाराज ने कहा, "इस खजाने का अंदाज करना भी मुश्किल है।"

इंद्र - जो कुछ खजाना इस तिलिस्म के अंदर मैंने देखा और पाया है उसका यह पासंग भी नहीं है। उसे बहुत जल्द ऐयार लोग आपके पास पहुंचावेंगे। उन्हीं के साथ-साथ कई चीजें दिल्लगी की भी हैं जिनमें एक चीज वह भी है जिसकी बदौलत हम लोग एक दफे हंसते-हंसते दीवार के अंदर कूद पड़े और मायारानी के हाथ में गिरफ्तार हो गए थे।

जीत - (ताज्जुब से) हां! अगर वह चीज शीघ्र बाहर निकाल ली जाय तो (सुरेन्द्रसिंह से) कुमारों की शादी में सर्वसाधारण को उसका तमाशा दिखाया जा सकता है।

सुरेन्द्र - बहुत अच्छी बात है, ऐसा ही होगा।

इंद्र - इस तिलिस्म में घुसने के पहले ही मैंने सभों का साथ छोड़ दिया अर्थात् नकाबपोशों को (कैदियों को) बाहर ही छोड़कर केवल हम दोनों भाई इसके अंदर घुसे और काम करते हुए धीरे-धीरे आपकी सेवा में जा पहुंचे।

सुरेन्द्र - तो शायद इसी तरह हम लोग भी सब तमाशा देखते हुए उसी चबूतरे की राह बाहर निकलेंगे?

जीत - मगर क्या उन चलती-फिरती तस्वीरों का तमाशा न देखिएगा?

सुरेन्द्र - हां ठीक है उस तमाशे को तो जरूर देखेंगे।

इंद्र - तो अब यहां से लौट चलना चाहिए क्योंकि इस कमरे के आगे बढ़कर फिर आज ही लौट आना कठिन है, इसके अतिरिक्त अब दिन भी थोड़ा रह गया है, संध्यावंदन और भोजन इत्यादि के लिए भी समय चाहिए और फिर उन तस्वीरों का तमाशा भी कम से कम चार-पांच घंटे में पूरा होगा।

सुरेन्द्र - क्या हर्ज है, लौट चलो।

महाराज की आज्ञानुसार सब कोई वहां से लौटे और घूमते हुए बंगले के बाहर निकल आये, देखा तो वास्तव में दिन बहुत कम रह गया था।

बयान - 6

रात आधे घंटे से कुछ ज्यादे जा चुकी थी जब सब कोई अपने जरूरी कामों से निश्चिंत हो बंगले के अंदर घूमते-फिरते उसी चलती-फिरती तस्वीरों वाले कमरे में पहुंचे। इस समय बंगले के अंदर हर कमरे में रोशनी बखूबी हो रही थी जिसके विषय में भूतनाथ और देवीसिंह ने ताज्जुब के साथ खयाल किया कि यह काम बेशक उन्हीं लोगों का होगा जिन्हें यहां पहुंचने के साथ ही हम लोगों ने पहरा देते देखा था या जो हम लोगों को देखते ही बंगले के अंदर घुसकर गायब हो गए थे। ताज्जुब है कि महाराज को तथा और लोगों को भी उनके विषय में कुछ खयाल नहीं है और न कोई पूछता ही है कि वे कौन थे और कहां गए मगर हमारा दिल उनका हाल जाने बिना बेचैन हो रहा है।

चलती - फिरती तस्वीरों वाले कमरे में फर्श बिछा हुआ था और गद्दी लगी हुई थी जिस पर सब कोई कायदे से अपने-अपने ठिकाने पर बैठ गए और इसके बाद इंद्रजीतसिंह की आज्ञानुसार रोशनी गुल कर दी गई। कमरे में बिल्कुल अंधकार छा गया, यह नहीं मालूम होता था कि कौन क्या कर रहा है, खास करके इंद्रजीतसिंह की तरफ लोगों का ध्यान था जो इस तमाशे को दिखाने वाले थे मगर कोई कह नहीं सकता था कि वह क्या कर रहे हैं।

थोड़ी ही देर बाद चारों तरफ की दीवारें चमकने लगीं और उन पर की कुल तस्वीरें बहुत साफ और बनिस्बत पहले के अच्छी तरह पर दिखाई देने लगीं। पहले तो तस्वीरें केवल चित्रकारी ही मालूम पड़ती थीं परंतु अब सचमुच की बातें दिखाई देने लगीं। मालूम होता था कि जैसे हम बहुत दूर से सच्चे किले, पहाड, जंगल, मैदान, आदमी, जानवर और फौज इत्यादि को देख रहे हैं। सब कोई ताज्जुब के साथ उस कैफियत को देख रहे थे कि यकायक बाजे की आवाज कान में आई। उस समय सभों का ध्यान जमानिया के किले की तस्वीर पर जा पड़ा जिधर से बाजे की आवाज आ रही थी। देखा कि -

एक बहुत बड़े मैदान में बेहिसाब फौज खड़ी है जिसके आमने-सामने दो हिस्से हैं मानो दो फौजें लड़ने के लिए तैयार खड़ी हैं। पैदल और सवार दोनों तरह की फौज हैं तथा तोप इत्यादि और भी जो कुछ फौज में होना चाहिए सब मौजूद है। इन दोनों

फौजों में एक की पोशाक सुर्ख और दूसरी की आसमानी थी। बाजे की आवाज केवल सुर्ख वर्दी वाली फौज में से आ रही थी बल्कि बाजे वाले अपना काम करते हुए साफ दिखाई दे रहे थे। यकायक सुर्ख वर्दी वाली फौज हिलती हुई दिखाई पड़ी। गौर करने पर मालूम हुआ कि सिपाहियों का मुंह घूम गया है और वे दाहिनी तरफ वाली एक पहाड़ी की तरफ तेजी के साथ बाजे की गत पर पैर रखते हुए जा रहे हैं। जैसे-जैसे फौज दूर होती जाती वैसे ही वेसे बाजे की आवाज भी दूर होती जाती है। देखते ही देखते वह फौज मानो कोसों दूर निकल गई और एक पहाड़ी के पीछे की तरफ जाकर आंखों की ओट हो गई। अब यह मैदान ज्यादा खुलासा दिखाई देने लगा। जितनी जगह दोनों फौजों से भरी थी वह एक फौज के हिस्से में रह गई। अब दूसरी अर्थात् आसमानी वर्दी वाली फौज में से बाजे की आवाज आने लगी और सवार तथा पैदल भी चलते हुए दिखाई देने लगे। एक सवार हाथ में झंडा लिए तेजी के साथ घोड़ा दौड़ाकर मैदान में आ खड़ा हुआ और झंडे के इशारे से फौज को कवायद कराने लगा। यह कवायद घंटे भर तक होती रही और इस बीच में आले दर्जे की होशियारी, चालाकी, मुस्तैदी, सफाई और बहादुरी दिखाई दी जिससे सब कोई बहुत ही खुश हुए और महाराज बोले, "बेशक फौज को ऐसा ही तैयार करना चाहिए।"

कवायद खत्म करने के बाद बाजा बंद हुआ और वह फौज एक तरफ को रवाना हुई, मगर थोड़ी ही दूर गई होगी कि उस लाल वर्दी वाली फौज ने यकायक पहाड़ी के पीछे से निकलकर इस फौज पर धावा मारा। इस कैफियत को देखते ही आसमानी वर्दी वाली फौज के अफसर होशियर हो गए, झंडे का इशारा पाते ही बाजा पुनः बजने लगा, और फौजी सिपाही लड़ने के लिए तैयार हो गए। इस बीच में वह फौज भी आ पहुंची और दोनों में घमासान लड़ाई होने लगी।

इस कैफियत को देखकर महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह वगैरह तथा ऐयार लोग हौरान हो गए, और हद्द से ज्यादे ताज्जुब करने लगे। लड़ाई के फन की ऐसी कोई बात नहीं थी जो इसमें न दिखाई पड़ी हो। कई तरह की घुसबंदी और किलेबंदी के साथ ही साथ घुड़सवारों की कारीगरी ने सभों को सकते में डाल दिया और सभों के मुंह से बार-बार 'वाह-वाह' की आवाज निकलती रही। यह तमाशा कई घंटे में खत्म हुआ और इसके बाद एकदम से अंधकार हो गया, उस समय इंद्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर की रोशनी और देवीसिंह ने इशारा पाकर कमरे में रोशनी की जो पहले बुझा दी गई थी।

इस समय रात थोड़ी-सी बच गई थी जो सभों ने सोकर बिता दी मगर स्वप्न में भी इसी तरह के खेल-तमाशे देखते रहे। जब सभों की आंखें खुलीं तो दिन घंटे भर से ज्यादे चढ़ चुका था। घबड़ाकर सब कोई उठ खड़े हुए और कमरे के बाहर निकलकर जरूरी कामों से छुट्टी पाने का बंदोबस्त करने लगे। इस समय जिन चीजों की सभों को जरूरत पड़ी वे सब चीजें वहां मौजूद पाई गईं मगर उन दोनों स्त्रियों पर किसी की निगाह न पड़ी जिन्हें यहां आने के साथ ही सभों ने देखा था।

बयान - 7

जरूरी कामों से छुट्टी पाकर ऐयारों ने रसोई बनाई क्योंकि इस बंगले में खाने-पीने की सभी चीजें मौजूद थीं और सभों ने खुशी-खुशी भोजन किया। इसके बाद सब कोई उसी कमरे में आकर बैठे जिसमें रात को चलती-फिरती तस्वीरों का तमाशा देखा था। इस समय भी सभी की निगाहें ताज्जुब के साथ उन्हीं तस्वीरों पर पड़ रही थीं।

सुरेन्द्र - मैं बहुत गौर कर चुका मगर अभी तक समझ में न आया कि इन तस्वीरों में किस तरह की कारीगरी खर्च की गई है जो ऐसा तमाशा दिखाती हैं। अगर मैं अपनी आंखों से इस तमाशे को देखे हुए न होता और कोई गैर आदमी मेरे सामने ऐसे तमाशे का जिक्र करता तो मैं उसे पागल समझता मगर स्वयं देख लेने पर भी विश्वास नहीं होता कि दीवार पर लिखी तस्वीरें इस तरह काम करेंगी।

जीत - बेशक ऐसी ही बात है। इतना देखकर भी किसी के सामने यह कहने का हौसला न होगा कि मैंने ऐसा तमाशा देखा था और सुनने वाला भी कभी विश्वास न करेगा।

ज्योति - आखिर तिलिस्म है, इसमें सभी बातें आश्चर्य की दिखाई देंगी।

जीत - चाहे तिलिस्म हो मगर इसके बनाने वाले तो आदमी ही थे। जो बात मनुष्य के किये नहीं हो सकती वह तिलिस्म में भी नहीं दिखाई दे सकती।

गोपाल - आपका कहना बहुत ठीक है, तिलिस्म की बातें चाहे कैसा ही ताज्जुब पैदा करने वाली क्यों न हों मगर गौर करने से उनकी कारीगरी का पता लग ही जायगा। यह आपने बहुत ठीक कहा कि आखिर तिलिस्म के बनाने वाले भी तो मनुष्य ही थे!

वीरेन्द्र - जब तक समझ न आवे तब तक उसे चाहे कोई जादू कहे या करामात कहे मगर हम लोग सिवाय कारीगरी के कुछ भी नहीं कह सकते और पता लगाने तथा

भेद मालूम हो जाने पर यह बात सिद्ध हो ही जाती है। इन चित्रों की कारीगरी पर भी अगर गौर किया जायगा तो कुछ न कुछ पता लग ही जायगा, ताज्जुब नहीं कि इंद्रजीतसिंह को इसका भेद मालूम हो।

सुरेन्द्र - बेशक इंद्रजीत को इसका भेद मालूम होगा। (इंद्रजीतसिंह की तरफ देखकर) तुमने किस तरकीब से इन तस्वीरों को चलाया था

इंद्र - (मुस्कराते हुए) मैं आपसे अर्ज करूंगा और यह भी बताऊंगा कि इसमें भेद क्या है। मालूम हो जाने पर आप इसे एक साधारण बात समझेंगे। पहली दफे जब मैंने इस तमाशे को देखा था तो मुझे भी बड़ा ही ताज्जुब हुआ था मगर तिलिस्मी किताब की मदद से जब मैं इस दीवार के अंदर पहुंचा तो सब भेद खुल गया।

सुरेन्द्र - (खुश होकर) तब तो हम लोग बेफायदे परेशान हो रहे हैं और इतना सोच-विचार कर रहे हैं, तुम अब तक चुप क्यों थे?

गोपाल - ऐयारों की तबीयत देख रहे थे।

सुरेन्द्र - खैर बताओ तो सही कि इसमें क्या कारीगरी है?

इतना सुनते ही इंद्रजीतसिंह उठकर उस दीवार के पास चले गये और सुरेन्द्रसिंह की तरफ देखकर बोले, "आप जरा तकलीफ कीजिए तो मैं इस भेद को समझा दूं!"

महाराज सुरेन्द्रसिंह उठकर कुमार के पास चले गये और उनके पीछे-पीछे और लोग भी वहां जाकर खड़े हो गये। इंद्रजीतसिंह ने दीवार पर हाथ फेरकर सुरेन्द्रसिंह से कहा, "देखिये असल में इस दीवार पर किसी तरह की चित्रकारी या तस्वीर नहीं है, दीवार साफ है और वास्तव में शीशे की है, तस्वीरें जो दिखाई देती हैं वे इसके अंदर और दीवार से अलग हैं।"

कुमार की बात सुनकर सभों ने ताज्जुब के साथ दीवार पर हाथ फेरा और जीतसिंह ने खुश होकर कहा - "ठीक है, अब हम इस कारीगरी को समझ गए! ये तस्वीरें अलग-अलग किसी धातु के टुकड़ों पर बनी हुई हैं और ताज्जुब नहीं तार या कमानी पर जड़ी हों, किसी तरह की शक्ति पाकर उस तार या कमानी की हरकत होती है और उस समय ये तस्वीरें चलती हुई दिखाई देती हैं।"

इंद्र - बेशक यही बात है, देखिए अब मैं इन्हें फिर चलाकर आपको दिखाता हूं और इसके बाद दीवार के अंदर ले चलकर सब भ्रम दूर कर दूंगा।

इस दीवार में जिस जगह जमानिया के किले की तस्वीर बनी थी उसी जगह किले के बुर्ज के ठिकाने पर कई सूराख भी दिखाये गये थे जिनमें से एक छेद (सूराख) वास्तव में सच्चा था पर वह केवल इतना ही लंबा-चौड़ा था कि एक मामूली खंजर का हिस्सा उसके अंदर आ सकता था। इंद्रजीतसिंह ने कमर से तिलिस्मी खंजर निकालकर उसके अंदर डाल दिया और महाराज सुरेन्द्रसिंह तथा जीतसिंह की तरफ देखकर कहा, "इस दीवार के अंदर जो पुर्जे बने हैं वे बिजली का असर पहुंचते ही चलने-फिरने या हिलने लगते हैं। इस तिलिस्मी खंजर में आप जानते ही हैं कि पूरे दर्जे की बिजली भरी हुई है, अस्तु उन पुर्जों के साथ इनका संयोग होने ही से काम हो जाता है।

इतना कहकर इंद्रजीतसिंह चुपचाप खड़े हो गये और सभों ने बड़े गौर से उन तस्वीरों को देखना शुरू किया बल्कि महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह और राजा गोपालसिंह ने तो कई तस्वीरों के ऊपर हाथ भी रख दिया। इतने ही में दीवार चमकने लगी और इसके बाद तस्वीरों ने वही रंगत पैदा की जो हम ऊपर बयान में लिख आये हैं। महाराज और राजा गोपालसिंह वगैरह ने जो अपना हाथ तस्वीरों पर रख दिया था वह ज्यों का त्यों बना रहा और तस्वीरें उनके हाथों के नीचे से निकलकर इधर-से-उधर आने-जाने लगीं जिसका असर उनके हाथों पर कुछ भी नहीं होता था, इस सबब से सभों को निश्चय हो गया कि उन तस्वीरों का इस दीवार से कोई संबंध नहीं। इस बीच में कुंअर इंद्रजीतसिंह ने अपना तिलिस्मी खंजर दीवार के अंदर से खींच लिया। उसी समय दीवार का चमकना बंद हो गया और तस्वीरें जहां की तहां खड़ी हो गईं अर्थात् जो जितनी चल चुकी थी उतनी ही चलकर रुक गई। दीवार पर गौर करने से मालूम होता था कि तस्वीरें पहले ढंग की नहीं बल्कि दूसरे ही ढंग की बनी हुई हैं।

जीत - यह भी बड़े मजे की बात है, लोगों को तस्वीरों के विषय में धोखा देने और ताज्जुब में डालने के लिए इससे बढ़कर कोई खेल हो नहीं सकता।

तेज - जी हां, एक दिन में पचासों तरह की तस्वीरें इस दीवार पर लोगों को दिखा सकते हैं, पता लगना तो दूर रहा गुमान भी नहीं हो सकता कि यह क्या मामला है और ऐसी अनूठी तस्वीरें नित्य क्यों बन जाती हैं।

सुरेन्द्र - बेशक यह खेल मुझे अच्छा मालूम हुआ, परंतु अब इन तस्वीरों को ठीक अपने ठिकाने पर पहुंचाकर छोड़ देना चाहिए।

"बहुत अच्छा" कहकर इंद्रजीतसिंह आगे बढ़ गये और पुनः तिलिस्मी खंजर उसी सूराख में डाल दिया जिससे उसी तरह दीवार चमकने और तस्वीरें चलने लगीं। ताज्जुब के साथ लोग उसका तमाशा देखते रहे। कई घंटे के बाद जब तस्वीरों की लीला समाप्त हुई और एक विचित्र ढंग के खटके की आवाज आई तब इंद्रजीतसिंह ने दीवार के अंदर से तिलिस्मी खंजर निकाल लिया और दीवार का चमकना भी बंद हो गया।

इस तमाशे से छुट्टी पाकर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने इंद्रजीतसिंह की तरफ देखा और कहा, "अब हम लोगों को इस दीवार के अंदर ले चलो।"

इंद्र - जो आज्ञा, पहले बाहर से जांच कर आप अंदाजा कर लें कि यह दीवार कितनी मोटी है।

सुरेन्द्र - इसका अंदाज हमें मिल चुका है, दूसरे कमरे में जाने के लिए इसी दीवार में जो दरवाजा है उसकी मोटाई से पता लग जाता है जिस पर हमने गौर किया है।

इंद्र - अच्छा तो अब एक दफे आप पुनः उसी दूसरे कमरे में चलें क्योंकि इस दीवार के अंदर जाने का रास्ता उधर ही से है।

इंद्रजीतसिंह की बात सुन महाराज सुरेन्द्रसिंह तथा सब कोई उठ खड़े हुए और कुमार के साथ पुनः उसी कमरे में गये जिसमें दो चबूतरे बने हुए थे।

इस कमरे में तस्वीर वाले कमरे की तरफ जो दीवार थी उसमें एक अलमारी का निशान दिखाई दे रहा था और उसके बीचोंबीच में लोहे की एक खूंटी गड़ी हुई थी जिसे इंद्रजीतसिंह ने उमेठना शुरू किया। तीस-पैंतीस दफे उमेठकर अलग हो गए और दूर खड़े होकर उस निशान की तरफ देखने लगे। थोड़ी देर बाद वह अलमारी हिलती हुई मालूम पड़ी और यकायक उसके दोनों पल्ले दरवाजे की तरह खुल गए। साथ ही उसके अंदर से दो औरतें निकलती हुई दिखाई पड़ीं जिनमें एक भूतनाथ की स्त्री थी और दूसरी देवीसिंह की स्त्री चंपा। दोनों औरतों पर निगाह पड़ते ही भूतनाथ और देवीसिंह चमक उठे और उनके ताज्जुब की कोई हद न रही, साथ ही इसके दोनों ऐयारों को क्रोध भी चढ़ आया और लाल-लाल आंख करके उन औरतों की तरफ देखने लगे। उन्हीं के साथ ही साथ और लोगों ने भी ताज्जुब के साथ उन औरतों को देखा।

इस समय उन दोनों औरतों का चेहरा नकाब से खाली था मगर भूतनाथ और देवीसिंह को देखते ही उन दोनों ने आंचल से अपना चेहरा छिपा लिया और पलटकर

पुनः उसी अलमारी के अंदर जा लोगों की निगाह से गायब हो गईं। उनकी इस करतूत ने भूतनाथ और देवीसिंह के क्रोध को और भी बढ़ा दिया।

बयान - 8

अब हम पीछे की तरफ लौटते हैं और पुनः उस दिन का हाल लिखते हैं जिस दिन महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह वगैरह तिलिस्मी तमाशा देखने के लिए रवाना हुए हैं। हम ऊपर के बयान में लिख आये हैं कि उस समय महाराज और कुमारों के साथ भैरोसिंह और तारासिंह न थे, अर्थात् वे दोनों घर पर ही रह गये थे, अस्तु इस समय उन्हीं दोनों का हाल लिखना बहुत जरूरी हो गया है।

महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह वगैरह के चले जाने के बाद भैरोसिंह अपनी मां से मिलने के लिए तारासिंह को साथ लिए हुए महल में गये। उस समय चपला अपनी प्यारी सखी चंपा के कमरे में बैठी हुई धीरे-धीरे बातें कर रही थी जो भैरोसिंह और तारासिंह को आते देख चुप हो गई और इन दोनों की तरफ देखकर बोली, "क्या महाराज तिलिस्मी तमाशा देखने के लिए गए हैं?'

भैरोसिंह - हां अभी थोड़ी ही देर हुई कि वे लोग उसी पहाड़ी की तरफ रवाना हो गए।

चपला - (चंपा से) तो अब तुम्हें भी तैयार हो जाना पड़ेगा।

चंपा - जरूर, मगर तुम भी क्यों नहीं चलतीं?

चपला - जी तो मेरा ऐसा ही चाहता है मगर मामा साहब की आज्ञा हो तब तो!

चंपा - जहां तक मैं खयाल करती हूं वे कभी इनकार न करेंगे। बहिन जब से मुझे मालूम हुआ है कि इंद्रदेव तुम्हारे मामा होते हैं तब से मैं बहुत प्रसन्न हूं।

चपला - मगर मेरी खुशी का तुम अंदाजा नहीं कर सकतीं, खैर इस समय असल काम की तरफ ध्यान देना चाहिए। (भैरोसिंह और तारासिंह की तरफ देखकर) कहो तुम लोग इस समय यहां कैसे आये?

तारा - (चपला के हाथ में एक पुर्जा देकर) जो कुछ है इसी से मालूम हो जायगा।

चपला ने तारासिंह के हाथ से पुर्जा लेकर पढ़ा और फिर चंपा के हाथ में देकर कहा, "अच्छा जाओ कह दो कि हम लोगों के लिए किसी तरह का तरद्दुद न करें, मैं अभी जाकर कमलिनी और लक्ष्मीदेवी से मुलाकात करके सब बातें तै कर लेती हूं।"

"बहुत अच्छा" कहकर भैरोसिंह और तारासिंह वहां से रवाना हुए और इंद्रदेव के डेरे की तरफ चले गये।

जिस समय महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह तिलिस्मी कैफियत देखने के लिए रवाना हुए उसके दो या तीन घड़ी बाद घोड़े पर सवार इंद्रदेव भी अपने चेहरे पर नकाब डाले हुए उसी पहाड़ी की तरफ रवाना हुए मगर ये अकेले न थे बल्कि और भी तीन नकाबपोश इनके साथ थे। जब ये चारों आदमी उस पहाड़ी के पास पहुंचे तो कुछ देर के लिए रुके और आपस में यों बातचीत करने लगे -

इंद्रदेव - ताज्जुब है कि अभी तक हमारे आदमी लोग यहां तक नहीं पहुंचे।

दूसरा - और जब तक वे लोग नहीं आवेंगे तब तक यहां अटकना पड़ेगा।

इंद्रदेव - बेशक।

तीसरा - व्यर्थ यहां अटके रहना तो अच्छा न होगा।

इंद्रदेव - तब क्या किया जायगा?

तीसरा - आप लोग जल्दी से वहां पहुंचकर अपना काम कीजिए और मुझे अकेले इसी जगह छोड़ दीजिए, मैं आपके आदमियों का इंतजार करूंगा और जब वे आ जायेंगे तो सब चीजें लिए आपके पास पहुंच जाऊंगा।

इंद्रदेव - अच्छी बात है, मगर उन सब चीजों को क्या तुम अकेले उठा लोगे?

तीसरा - उन सब चीजों की क्या हकीकत है, कहिए तो आपके आदमियों को भी उन चीजों के साथ पीठ पर लादकर लेता आऊं।

इंद्र - शाबाश! अच्छा रास्ता तो न भूलोगे?

तीसरा - कदापि नहीं, अगर मेरी आंखों पर पट्टी बांधकर आप वहां तक ले गये होते तब भी मैं रास्ता न भूलता और टटोलता हुआ वहां तक पहुंच ही जाता।

इंद्रदेव - (हंसकर) बेशक तुम्हारी चालाकी के आगे यह कोई कठिन काम नहीं है, अच्छा हम लोग जाते हैं, तुम सब चीजें लेकर हमारे आदमियों को फौरन वापस कर देना।

इतना कहकर इंद्रदेव ने उस तीसरे नकाबपोश को उसी जगह छोड़ा और दो नकाबपोशों को साथ लिए हुए आगे की तरफ बढ़े।

जिस सुरंग की राह से राजा वीरेन्द्रसिंह वगैरह उस तिलिस्मी बंगले में गये थे उनसे लगभग आध कोस उत्तर की तरफ हटकर और भी एक सुरंग का छोटा-सा मुहाना था जिसका बाहरी हिस्सा जंगली लताओं और बेलों से बहुत ही छिपा हुआ था। इंद्रदेव दोनों नकाबपोशों को साथ लिए तथा पेड़ों की आड़ देकर चलते हुए इसी दूसरी सुरंग के मुहाने पर पहुंचे और जंगली लताओं को हटाकर बड़ी होशियारी से इस सुरंग के अंदर घुस गये।

बयान - 9

देवीसिंह को चंपा की सच्चाई पर भरोसा था और वह उसे बहुत ही नेक तथा पतिव्रता भी समझते थे, जिस पर चंपा ने देवीसिंह के चरण की कसम खाकर विश्वास दिला दिया था कि वह नकाबपोशों के घर में नहीं गई और कोई सबब न था कि देवीसिंह चंपा की बात झूठ समझते। इस जगह यद्यपि देवीसिंह, पुनः चंपा को देखकर क्रोध में आ गये मगर तुरंत ही नीचे लिखी बातें विचारकर ठंडे हो गए और सोचने लगे -

'क्या मुझे पहचानने में धोखा हुआ नहीं-नहीं मेरी आंखें ऐसी गंदी नहीं हैं। तो क्या वास्तव में वह चंपा ही थी जिसे अभी मैंने देखा या पहले भी देखा था। यह भी नहीं हो सकता! चंपा जैसी नेक औरत कसम खाकर मुझसे झूठ भी नहीं बोल सकती। हां उसने क्या कसम खाई थी यही कि 'मैं आपके चरणों की कसम खाकर कहती हूं कि मुझे कुछ भी याद नहीं कि आप कब की बात कर रहे हैं।' ये ही उसके शब्द हैं, मगर यह कसम तो ठीक नहीं। यहां आने के बारे में उसने कसम नहीं खाई बल्कि अपनी याद के बारे में कसम खाई है, जिसे ठीक नहीं भी कह सकते। तो क्या उसने वास्तव में मुझे भूलभुलैये में डाल रखा है खैर यदि ऐसा भी हो तो मुझे रंज न होना चाहिए क्योंकि वह नेक है, यदि ऐसा किया भी होगा तो किसी अच्छे ही मतलब से किया होगा या फिर कुमारों की आज्ञा से किया होगा।'

ऐसी बातों को सोचकर देवीसिंह ने अपने क्रोध को ठंडा किया मगर भूतनाथ की बेचैनी दूर नहीं हुई।

वे दोनों औरतें जब अलमारी के अंदर घुसकर गायब हो गईं तब हमारे दोनों कुमार तथा महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह ने भी उसके अंदर पैर रखा। दरवाजे के साथ दाहिनी तरफ एक तहखाने के अंदर जाने का रास्ता था जिसके बारे में

दरियाफ्त करने पर इंद्रजीतसिंह ने बयान किया कि "जमानिया जाने का रास्ता है, तहखाने में उतर जाने के बाद एक सुरंग मिलेगी जो बराबर जमानिया तक चली गई है।" इंद्रजीतसिंह की बात सुनकर देवीसिंह और भूतनाथ को विश्वास हो गया कि दोनों औरतें इसी तहखाने में उतर गई हैं जिससे उन्हें भागने के लिए काफी जगह मिल सकती है। भूतनाथ ने देवीसिंह की तरफ देखकर इशारे से कहा कि 'इस तहखाने में चलना चाहिए' मगर जवाब में देवीसिंह ने इशारे से ही इंकार करके अपनी लापरवाही जाहिर कर दी।

उस दीवार के अंदर इतनी जगह न थी कि सब कोई एक साथ ही जाकर वहां की कैफियत देख सकते, अतएव दो-तीन दफे करके सब कोई उसके अंदर गये और उन सब पुर्जों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए जिनके सहारे तस्वीरें चलती-फिरती और काम करती थीं। जब सब कोई उस कैफियत को देख चुके तब उस दीवार का दरवाजा बंद कर दिया गया।

इस काम से छुट्टी पाकर सब कोई इंद्रजीतसिंह की इच्छानुसार उस चबूतरे के पास आए जिस पर सफेद पत्थर की खूबसूरत पुतली बैठी हुई थी। इंद्रजीतसिंह ने सुरेन्द्रसिंह की तरफ देखकर कहा, "यदि आज्ञा हो तो मैं इस दरवाजे को खोलूं और आपको तिलिस्म के अंदर ले चलूं।"

सुरेन्द्र - हम भी यही चाहते हैं कि अब तिलिस्म के अंदर चलकर वहां की कैफियत देखें, मगर यह तो बताओ कि जब इस चबूतरे के अंदर जाने के बाद हम यह तिलिस्म देखते हुए चुनारगढ़ वाले तिलिस्म की तरफ रवाना होंगे तो वहां पहुंचने में कितनी देर लगेगी?

इंद्र - कम से कम बारह घंटे। तमाशा देखने के सबब से यदि इससे ज्यादे देर हो जाय तो भी कोई ताज्जुब नहीं।

सुरेन्द्र - रात हो जाने के सबब किसी तरह का हर्ज तो न होगा?

इंद्र - कुछ भी नहीं, रात भर बराबर तमाशा देखते हुए हम लोग चले जा सकते हैं।

सुरेन्द्र - खैर तब तो कोई हर्ज नहीं।

इंद्रजीतसिंह ने पुतली वाले चबूतरे का दरवाजा उसी ढंग से खोला जैसे पहले खोल चुके थे और सभों को साथ लिए हुए नीचे वाले तहखाने में पहुंचे जिसमें बड़े-बड़े हण्डे, अशर्फियों और जवाहिरात से भरे हुए पड़े थे।

इस कमरे में दो दरवाजे भी थे जिनमें एक तो खुला हुआ था और दूसरा बंद। खुले हुए दरवाजे के बारे में दरियाफ्त करने पर कुंअर इंद्रजीतसिंह ने बयान किया कि यह रास्ता जमानिया को गया है और हम दोनों भाई तिलिस्म तोड़ते हुए इसी राह से आये हैं। यहां से बहुत दूर पर एक स्थान है जिसका नाम तिलिस्मी किताब में 'ब्रह्म-मंडल' लिखा हुआ है, वहां से भी मुझे एक छोटी-सी किताब मिली थी जिसमें इस विचित्र बंगले का पूरा हाल लिखा हुआ था कि तिलिस्म (चुनारगढ़ वाला) तोड़ने वाले के लिए क्या-क्या जरूरी है। उस किताब को चुनारगढ़ तिलिस्म की चाभी कहें तो अनुचित न होगा। वह किताब इस समय मौजूद नहीं है क्योंकि पढ़ने के बाद वह तिलिस्म तोड़ने के काम में खर्च कर दी गई। उस स्थान (ब्रह्म-मंडल) में बहुत-सी तस्वीरें देखने योग्य हैं और वहां की सैर करके भी आप बहुत प्रसन्न होंगे।"

सुरेन्द्र - हम जरूर उस स्थान को देखेंगे मगर अभी नहीं। हां और यह दूसरा दरवाजा जो बंद है कहां जाने के लिए है?

इंद्र - यही चुनारगढ़ वाले तिलिस्म में जाने का रास्ता है, इस समय यही दरवाजा खोला जायगा और हम लोग इसी राह से जायेंगे।

सुरेन्द्र - खैर तो अब इसे खोलना चाहिए।

पाठक, आपको इस संतति के पढ़ने से मालूम होता ही होगा कि अब यह उपन्यास समाप्ति की तरफ चला जा रहा है। हमारे लिखने के लिए अब सिर्फ दो बातें रह गई हैं, एक तो इस चुनारगढ़ वाले तिलिस्म की कैफियत और दूसरे दुष्ट कैदियों का मुकदमा जिसके साथ बचे-बचाये भेद भी खुल जायेंगे। हमारे पाठकों में बहुत से ऐसे हैं जिनकी रुचि अब तिलिस्मी तमाशे की तरफ कम झुकती है परंतु उन पाठकों की संख्या बहुत ज्यादे है जो तिलिस्म के तमाशे को पसंद करते हैं और उसकी अवस्था विस्तार के साथ दिखाने अथवा लिखने के लिए बराबर जोर दे रहे हैं। इस उपन्यास में जो कुछ तिलिस्मी बातें लिखी गई हैं यद्यपि वे असंभव नहीं और विज्ञानवेत्ता अथवा साइंस जानने वाले जरूर कहेंगे कि 'हां ऐसी चीजें तैयार हो सकती हैं' तथापि बहुत से अनजान आदमी ऐसे भी हैं जो इसे बिल्कुल खेल ही समझते हैं और कई इसकी देखादेखी अपनी अनूठी किताबों में असंभव बातें लिखकर तिलिस्म के नाम

को बदनाम भी करने लग गए हैं, इसलिए हमारा ध्यान अब तिलिस्म लिखने की तरफ नहीं झुकता मगर क्या किया जाय लाचारी है, एक तो पाठकों की रुचि की तरफ ध्यान देना पड़ता है दूसरे चुनारगढ़ के चबूतरे वाले तिलिस्म की कैफियत लिखे बिना काम नहीं चलता जिसे इस उपन्यास की बुनियाद कहना चाहिए और जिसके लिए चंद्रकान्ता उपन्यास में वादा कर चुके हैं। अस्तु अब इस जगह चुनारगढ़ के चबूतरे वाले तिलिस्म की कैफियत लिखकर इस पक्ष को पूरा करते हैं, तब उसके बाद दोनों कुमारों की शादी और कैदियों के मामले की तरफ ध्यान देकर इस उपन्यास को पूरा करेंगे।

महाराज की आज्ञानुसार कुंअर इंद्रजीतसिंह दरवाजा खोलने के लिए तैयार हो गए। इस दरवाजे के ऊपर वाले महराब में किसी धातु के तीन मोर बने हुए थे जो हरदम हिला ही करते थे। कुमार ने उन तीनों मोरों की गर्दन घुमाकर एक में मिला दी, उसी समय दरवाजा भी खुल गया और कुमार ने सभों को अंदर जाने के लिए कहा। जब सब उसके अंदर चले गए तब कुमार ने उन मोरों को छोड़ दिया और दरवाजे के अंदर जाकर महाराज से कहा, "यह दरवाजा इसी ढंग से खुलता है। मगर इसके बंद करने की कोई तरकीब नहीं है, थोड़ी देर में आप से आप बंद हो जायगा। देखिए इस तरफ भी दरवाजे के ऊपर वाले महराब में उसी तरह के मोर बने हुए हैं अतएव इधर से भी दरवाजा खोलने के समय वही तरकीब करनी होगी।"

दरवाजे के अंदर जाने के बाद तिलिस्मी खंजर से रोशनी करने की जरूरत न रही क्योंकि यहां की छत में कई सूराख ऐसे बने हुए थे जिनमें से रोशनी बखूबी आ रही थी और आगे की तरफ निगाह दौड़ाने से यह भी मालूम होता था कि थोड़ी दूर जाने के बाद हम लोग मैदान में पहुंच जायेंगे जहां से खुला आसमान बखूबी दिखाई देगा, अस्तु तिलिस्मी खंजर की रोशनी बंद कर दी गई और दोनों कुमारों के पीछे-पीछे सब कोई आगे की तरफ बढ़े। लगभग डेढ़ सौ कदम चले जाने के बाद एक खुला हुआ दरवाजा मिला जिसमें चौखट या किवाड़ कुछ भी न था। इस दरवाजे के बाहर होने पर सभों ने अपने को संगमर्मर के एक छोटे से दालान में पाया और आगे की तरफ छोटा-सा बाग देखा जिसकी रविशें निहायत खूबसूरत स्याह और सफेद पत्थरों से बनी हुई थीं मगर पेड़ों की किस्म में केवल कुछ जंगली पौधों और लताओं की हरियाली मात्र ही बाग का नाम चरितार्थ करने के लिए दिखाई दे रही थी। इस बाग के चारों तरफ चार दालान चार ढंग के बने हुए थे और बीच में छोटे-छोटे कई चबूतरे और नहर की तौर पर सुंदर और पतली नालियां बनी हुई थीं जिनमें पहाड़ से गिरने वाले झरने का साफ जल बहकर वहां के पेड़ों को तरी पहुंचा रहा था और देखने में भी

बहुत भला मालूम होता था। मैदान में से निकलकर और आंख उठाकर देखने पर बाग के चारों तरफ ऊंचे-ऊंचे हरे-भरे पहाड़ दिखाई दे रहे थे और वे इस बात की गवाही दे रहे थे कि यह बाग पहाड़ी की तराई अथवा घाटी में इस ढंग से बना हुआ है कि बाहर से किसी आदमी को इसके अंदर आने की हिम्मत नहीं हो सकती और न कोई इसके अंदर से निकलकर बाहर ही जा सकता है।

कुंअर इंद्रजीतसिंह ने महाराज सुरेन्द्रसिंह की तरफ देखकर कहा, "उस चबूतरे वाले तिलिस्म के दो दर्जे हैं, एक तो यही बाग है और दूसरा उस चबूतरे के पास पहुंचने पर मिलेगा। इस बाग में आप जितने खूबसूरत चबूतरे देख रहे हैं सभों के अंदर बेअंदाज दौलत भारी पड़ी है। जिस समय हम दोनों भाई यहां आये थे इन चबूतरों का छूना बल्कि इनके पास पहुंचना भी कठिन हो रहा था, (एक चबूतरे के पास ले जाकर) देखिए चबूतरे की बगल में नीचे की तरफ कड़ी लगी हुई है और इसके साथ नथी हुई जो बारीक जंजीर है वह (हाथ का इशारा करके) इस तरफ एक कुएं में गिरी हुई है। इसी तरह हर एक चबूतरे में कड़ी और जंजीर लगी हुई हैं जो सब उसी कुएं में जाकर इकट्ठी हुई हैं। मैं नहीं कह सकता कि उस कुएं के अंदर क्या है मगर उसकी तासीर यह थी कि इन चबूतरों को कोई छू नहीं सकता था। इसके अतिरिक्त आपको यह सुनकर ताज्जुब होगा कि उस चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी चबूतरे में भी जिस पर पत्थर का (असल में किसी धातु का) आदमी सोया हुआ है एक जंजीर लगी हुई है और वह जंजीर भी भीतर-ही-भीतर यहां तक आकर उसी कुएं में गिरी हुई है जिसमें वे सब जंजीरें इकट्ठी हुई हैं, बस यही और इतना ही यहां का तिलिस्म है। इसके अतिरिक्त दरवाजों को छिपाने के सिवाय और कुछ भी नहीं है। हम दोनों भाइयों को तिलिस्मी किताब की बदौलत यह सब हाल मालूम हो चुका था। अतएव जब हम दोनों भाई यहां आये थे तो इन चबूतरों से बिल्कुल हटे रहते थे। पहला काम हम लोगों ने जो किया वह यही था कि ये नालियां जो पानी से भरी और बहती हुई आप देख रहे हैं जिस पहाड़ी झरने की बदौलत लबालब हो रही हैं उसमें से एक नई नाली खोदकर उसका पानी उस कुएं में गिरा दिया जिसमें सब जंजीरें इकट्ठी हुई हैं क्योंकि वह चश्मा भी उस कुएं के पास ही है और अभी तक उसका पानी उस कुएं में बराबर गिर रहा है। जब उस चश्मे का पानी कई घंटे तक कुएं के अंदर गिरा तब इन चबूतरों का तिलिस्मी असर जाता रहा और ये छूने के लायक हुए मानो उस कुएं में बिजली की आग भरी हुई थी जो पानी गिरने से ठंडी हो गई। हम दोनों भाइयों ने तिलिस्मी खंजर से सब जंजीरों को काट-काटकर इन चबूतरों का और इस चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी चबूतरे का भी संबंध उस कुएं से छुड़ा दिया, इसके बाद इन चबूतरों को

खोलकर देखा और मालूम किया कि इनके अंदर क्या है। अब आपकी आज्ञा होगी तो ऐयार लोग इस दौलत को चुनारगढ़ या जहां आप कहेंगे पहुंचा देंगे।"

इसके बाद इंद्रजीतसिंह ने महाराज की आज्ञानुसार उन चबूतरों का ऊपरी हिस्सा जो संदूक के पल्ले की तरह खुलता था खोल-खोलकर दिखाया। महाराज तथा सब कोई यह देखकर बहुत प्रसन्न हुए कि उनमें बेहिसाब दौलत और जेवरों के अतिरिक्त बहुत-सी अनमोल चीजें भी भरी हुई हैं जिनमें से दो चीजें महाराज ने बहुत पसन्द कीं। एक तो जड़ाऊ सिंहासन जिसमें अनमोल हीरे और माणिक विचित्र ढंग से जड़े हुए थे और दूसरा किसी धातु का बना हुआ एक चंद्रमा था। इस चंद्रमा के दो पल्ले थे, जब दोनों पल्ले एक साथ मिला दिए गए तो उसमें से चंद्रमा की ही तरह साफ और निर्मल तथा बहुत दूर तक फैलने वाली रोशनी पैदा होती थी।

उन चबूतरों के अंदर की चीजों को देखते ही देखते तमाम दिन बीत गया। उस समय कुंअर इंद्रजीतसिंह ने महाराज की तरफ देखकर कहा, "इस बाग में इन चबूतरों के सिवाय और कोई चीज देखने योग्य नहीं है और अब रात भी हो गई है, इसलिए यद्यपि आगे की तरफ जाने में कोई हर्ज तो नहीं है मगर आज की रात इसी बाग में ठहर जाते तो अच्छा था।"

भूत - क्या आज की रात भूखे-प्यासे ही बितानी पड़ेगी?

इंद्रजीत - (मुस्कराते हुए) प्यासे तो नहीं रह सकते क्योंकि पानी का चश्मा बह रहा है जितना चाहो पी सकते हो मगर खाने के नाम पर तब तक कुछ नहीं मिल सकता जब तक कि हम चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी चबूतरे से बाहर न हो जाएं।

जीत - खैर कोई चिंता नहीं, ऐयारों के बटुए खाली न होंगे, कुछ-न-कुछ खाने की चीजें उनमें जरूर होंगी।

सुरेन्द्र - अच्छा अब जरूरी कामों से छुट्टी पाकर किसी दालान में आराम करने का बंदोबस्त करना चाहिए।

महाराज की आज्ञानुसार सब कोई जरूरी कामों से निपटने की फिक्र में लगे और इसके बाद एक दालान में आराम करने के लिए बैठ गये। खास-खास लोगों के लिए ऐयारों ने अपने सामान में से बिस्तरे का इंतजाम कर दिया।

बयान - 10

यह दालान जिसमें इस समय महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह आराम कर रहे हैं, बनिस्बत उस दालान के जिसमें ये लोग पहले-पहल पहुंचे थे बड़ा और खूबसूरत बना हुआ था। तीन तरफ दीवार थी और बाग की तरफ तेरह खंभे और महराब लगे हुए थे जिससे इसे बारहदरी भी कह सकते हैं। इसकी कुर्सी लगभग ढाई हाथ के ऊंची थी और इसके ऊपर चढ़ने के लिए पांच सीढ़ियां बनी हुई थीं। बारहदरी के आगे की तरफ कुछ सहन छूटा हुआ था जिसकी जमीन (फर्श) संगमर्मर और संगमूसा के चौखूटे पत्थरों से बनी हुई थी। बारहदरी की छत में मीनाकारी का काम बना हुआ था और तीनों तरफ की दीवारों में कई अलमारियां भी थीं।

रात पहर भर से कुछ ज्यादे जा चुकी थी। इस बारहदरी में जिसमें सब कोई आराम कर रहे थे एक अलमारी की कार्निस के ऊपर मोमबत्ती जल रही थी जो देवीसिंह ने अपने ऐयारी के बटुए में से निकालकर जलाई थी। किसी को नींद नहीं आयी थी बल्कि सब कोई बैठे हुए आपस में बातें कर रहे थे। महाराज सुरेन्द्रसिंह बाग की तरफ मुंह किये बैठे थे और उन्हें सामने की पहाड़ी का आधा हिस्सा भी जिस पर इस समय अंधकार की बारीक चादर पड़ी हुई थी, दिखाई दे रहा था। उस पहाड़ी पर यकायक मशाल की रोशनी देखकर महाराज चौंके और सभों को उस तरफ देखने का इशारा किया।

सभों ने उस रोशनी की तरफ ध्यान दिया और दोनों कुमार ताज्जुब के साथ सोचने लगे कि यह क्या मामला है इस तिलिस्म में हमारे सिवाय किसी गैर आदमी का आना कठिन ही नहीं बल्कि असंभव है, तब फिर मशाल की रोशनी कैसी! खाली रोशनी ही नहीं बल्कि उसके पास चार-पांच आदमी भी दिखाई देते हैं, हां यह नहीं जान पड़ता कि वे सब औरत हैं या मर्द।

और लोगों के विचार भी दोनों कुमारों ही की तरह थे और मशाल के साथ कई आदमियों को देखकर सभी ताज्जुब कर रहे थे। यकायक वह रोशनी गायब हो गई और आदमी दिखाई देने से रह गये मगर थोड़ी ही देर बाद वह रोशनी फिर दिखाई दी। अबकी दफे रोशनी और भी नीचे की तरफ थी और उसके साथ के आदमी साफ-साफ दिखाई देते थे।

गोपाल - (इंद्रजीतसिंह से) मैं समझता था कि आप दोनों भाइयों के सिवाय कोई गैर आदमी इस तिलिस्म में नहीं आ सकता।

इंद्रजीत - मेरा भी यही खयाल था मगर क्या आप भी यहां तक नहीं आ सकते आप तो तिलिस्म के राजा हैं।

गोपाल - हां मैं तो आ सकता हूं मगर सीधी राह से और अपने को बचाते हुए, वे काम मैं नहीं कर सकता जो आप कर सकते हैं, परंतु आश्चर्य तो यह है कि वे लोग पहाड़ पर से आते हुए दिखाई दे रहे हैं जहां से आने का रास्ता ही नहीं है। तिलिस्म बनाने वालों ने इस बात को जरूर अच्छी तरह विचार लिया होगा।

इंद्रजीत - बेशक ऐसा ही है मगर यहां पर क्या समझा जाय मेरा खयाल है कि थोड़ी ही देर में वे लोग इस बाग में आ पहुंचेंगे।

गोपाल - बेशक ऐसा ही होगा, (रुककर) देखिए रोशनी फिर गायब हो गई, शायद वे लोग किसी गुफा में घुस गये।

कुछ देर तक सन्नाटा रहा और सब कोई बड़े गौर से उस तरफ देखते रहे, इसके बाद यकायक बाग के पश्चिम तरफ वाले दालान में रोशनी मालूम होने लगी जो उस दालान के ठीक सामने था जिसमें हमारे महाराज तथा ऐयार लोग टिके हुए थे, मगर पेड़ों के सबब से साफ नहीं दिखाई देता था कि दालान में कितने आदमी आए हैं और क्या कर रहे हैं।

जब सभों को निश्चय हो गया कि वे लोग धीरे-धीरे पहाड़ों के नीचे उतरकर बाग के दालान या बारहदरी में आ गए हैं तब महाराज सुरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह को हुक्म दिया कि जाकर देखो और पता लगाओ कि वे लोग कौन हैं और क्या कर रहे हैं

गोपाल - (महाराज से) तेजसिंहजी का वहां जाना उचित न होगा क्योंकि यह तिलिस्म का मामला है और यहां की बातों से ये बिल्कुल बेखबर हैं, यदि आज्ञा हो तो कुंअर इंद्रजीतसिंह को साथ लेकर मैं जाऊं।

महाराज - ठीक है, अच्छा तुम्हीं दोनों आदमी जाकर देखो क्या मामला है। कुंअर इंद्रजीतसिंह और राजा गोपालसिंह वहां से उठे और धीरे-धीरे तथा पेड़ों की आड़ में अपने को छिपाते हुए उस दालान की तरफ रवाना हुए जिसमें रोशनी दिखाई दे रही थी, यहां तक कि उस दालान अथवा बारहदरी के बहुत पास पहुंच गये और एक पेड़ की आड़ में खड़े होकर गौर से देखने लगे।

इस दालान में उन्हें पंद्रह आदमी दिखाई दिये जिनके विषय में यह जानना कठिन था कि वे मर्द हैं या औरत, क्योंकि सभों की पोशाक एक ही रंग-ढंग की तथा सभों के चेहरे पर नकाब पड़ी हुई थी। इन्हीं पंद्रह आदमियों में से दो आदमी मशालची का काम दे रहे थे। जिस तरह उनकी पोशाक खूबसूरत और बेशकीमती थी उसी तरह मशाल भी सुनहरी तथा जड़ाऊ काम की दिखाई दे रही थी और उसके सिरे की तरफ बिजली की तरह रोशनी हो रही थी, इसके अतिरिक्त उनके हाथ में तेल की कुप्पी न थी और इस बात का कुछ पता नहीं लगता था कि इस मशाल की रोशनी का सबब क्या है।

राजा गोपालसिंह और इंद्रजीतसिंह ने देखा कि वे लोग शीघ्रता के साथ उस दालान को सजाने और फर्श वगैरह को ठीक करने का इंतजाम कर रहे हैं। बारहदरी के दाहिने तरफ एक खुला हुआ दरवाजा है जिसके अंदर वे लोग बार-बार जाते हैं और जिस चीज की जरूरत समझते हैं ले आते हैं। यद्यपि उन सभों की पोशाक एक ही रंग-ढंग की है और इसलिए बड़ाई-छुटाई का पता लगाना कठिन है तथापि उन सभों में से एक आदमी ऐसा है जो स्वयं कोई काम नहीं करता और एक किनारे कुर्सी पर बैठा हुआ अपने साथियों से काम ले रहा है। उसके हाथ में एक विचित्र ढंग की छड़ी दिखाई दे रही है जिसके मुट्ठे पर निहायत खूबसूरत और कुछ बड़ा हिरन बना हुआ है। देखते ही देखते थोड़ी देर में बारहदरी सज के तैयार हो गई और कंदीलों की रोशनी से जगमगाने लगी। उस समय वह नकाबपोश जो कुर्सी पर बैठा हुआ था और जिसे हम उस मंडली का सरदार भी कह सकते हैं अपने साथियों से कुछ कह-सुनकर बारहदरी के नीचे उतर आया और धीरे-धीरे उस तरफ रवाना हुआ जिधर महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह टिके हुए थे।

यह कैफियत देखकर राजा गोपालसिंह और इंद्रजीतसिंह जो छिपे-छिपे सब तमाशा देख रहे थे वहां से लौटे और शीघ्र ही महाराज के पास पहुंचकर जो कुछ देखा था संक्षेप में बयान किया। उसी समय एक आदमी आता हुआ दिखाई दिया। सभों का ध्यान उसी तरफ चला गया और इंद्रजीतसिंह और राजा गोपालसिंह ने समझा कि यह वही नकाबपोशों का सरदार होगा जिसे हम उस बारहदरी में देख आये हैं और जो हमारे देखते-देखते वहां से रवाना हो गया था मगर जब पास आया तो सभों का भ्रम जाता रहा और एकाएक इंद्रदेव पर निगाह पड़ते ही सब कोई चौंक पड़े। राजा गोपालसिंह और इंद्रजीतसिंह को इस बात का भी शक हुआ कि वह नकाबपोशों का सरदार शायद इंद्रदेव ही हो, मगर यह देखकर उन्हें ताज्जुब मालूम हुआ कि इंद्रदेव

उस (नकाबपोश की-सी) पोशाक में न था जैसा कि उस बारहदरी में देखा था बल्कि वह अपनी मामूली दरबारी पोशाक में था।

इंद्रदेव ने वहां पहुंचकर महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह, तेजसिंह, राजा गोपालसिंह तथा दोनों कुमारों को अदब के साथ झुककर सलाम किया और इसके बाद बाकी ऐयारों से भी "जै माया की" कहा।

सुरेन्द्र - इंद्रदेव, जब से हमने इंद्रजीतसिंह की जुबानी यह सुना है कि इस तिलिस्म के दारोगा तुम हो तब से हम बहुत ही खुश हैं, मगर ताज्जुब होता था कि तुमने इस बात की हमें कुछ भी खबर नहीं की और न हमारे साथ यहां आये ही। अब यकायक इस समय यहां पर तुम्हें देखकर हमारी खुशी और भी ज्यादे हो गई। आओ हमारे पास बैठ जाओ और यह कहो कि हम लोगों के साथ तुम यहां क्यों नहीं आये?

इंद्रदेव - (बैठकर) आशा है कि महाराज मेरा वह कसूर माफ करेंगे। मुझे कई जरूरी काम करने थे जिनके लिए अपने ढंग पर अकेले आना पड़ा। बेशक मैं इस तिलिस्म का दारोगा हूं और इसीलिए अपने को बड़ा ही खुशकिस्मत समझता हूं कि ईश्वर ने इस तिलिस्म को आप जैसे प्रतापी राजा के हाथ सौंपा है। यद्यपि आपके फर्माबर्दार और होनहार पोतों ने इस तिलिस्म को फतह किया है और इस सबब से वे इसके मालिक हुए हैं तथापि इस तिलिस्म का सच्चा आनंद और तमाशा दिखाना मेरा ही काम है, यह मेरे सिवाय किसी दूसरे के किए नहीं हो सकता। जो काम कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह का था उसे ये कर चुके अर्थात् तिलिस्म तोड़ चुके और जो कुछ इन्हें मालूम होना था हो चुका, परंतु उन बातों, भेदों और स्थानों का पता इन्हें नहीं लग सकता जो मेरे हाथ में हैं और जिसके सबब से मैं इस तिलिस्म का दारोगा कहलाता हूं। तिलिस्म बनाने वालों ने तिलिस्म के संबंध में दो किताबें लिखी थीं जिनमें से एक तो दारोगा के सुपुर्द कर गये और दूसरी तिलिस्म तोड़ने वाले के लिए छिपाकर रख गये जो कि अब दोनों कुमारों के हाथ लगीं, या कदाचित इनके अतिरिक्त और भी कोई किताब उन्होंने लिखी हो तो उसका हाल मैं नहीं जानता, हां जो किताब दारोगा के सुपुर्द कर गये थे वह वसीयतनामे के तौर पर पुश्तहापुश्त से हमारे कब्जे में चली आ रही है और आजकल मेरे पास मौजूद है। यह मैं जरूर कहूंगा कि तिलिस्म में बहुत से मुकाम ऐसे हैं जहां दोनों कुमारों का जाना तो असंभव ही है परंतु तिलिस्म टूटने के पहले मैं भी नहीं जा सकता था, हां अब मैं वहां बखूबी जा सकता हूं। आज मैं इसीलिए इस तिलिस्म के अंदर आपके पास आया हूं कि इस तिलिस्म का पूरा-पूरा तमाशा आपको दिखाऊं जिसे कुंअर इंद्रजीतसिंह और

आनंदसिंह नहीं दिखा सकते। परंतु इन कामों के पहले मैं महाराज से एक चीज मांगता हूं जिसके बिना काम नहीं चल सकता।

महाराज - वह क्या?

इंद्रदेव - जब तक इस तिलिस्म में आप लोगों के साथ हूं तब तक अदब, लेहाज और कायदे की पाबंदी से माफ रखा जाऊं!

महाराज - इंद्रदेव, हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं। जब तक तिलिस्म में हम लोगों के साथ हो तभी तक के लिए नहीं बल्कि हमेशा के लिए हमने इन बातों से तुम्हें छुट्टी दी, तुम विश्वास रखो कि हमारे बाल-बच्चे और सच्चे साथी भी हमारी इस बात का पूरा-पूरा लेहाज रखेंगे।

यह सुनते ही इंद्रदेव ने उठकर महाराज को सलाम किया और फिर बैठकर कहा, "अब आज्ञा हो तो खाने-पीने का सामान जो आप लोगों के लिए लाया हूं हाजिर करूं।"

महाराज - अच्छी बात है लाओ, क्योंकि हमारे साथियों में से कई ऐसे हैं जो भूख के मारे बेताब हो रहे होंगे।

तेज - इंद्रदेव, तुमने इस बात का परिचय तो दिया ही नहीं कि तुम वास्तव में इंद्रदेव ही हो या कोई और?

इंद्रदेव - (मुस्कराकर) मेरे सिवाय कोई गैर यहां आ नहीं सकता।

तेज - तथापि - 'चिलेण्डोला'।

इंद्रदेव - 'चक्रधर'।

वीरेन्द्र - मैं एक बात और पूछना चाहता हूं।

इंद्रदेव - आज्ञा।

वीरेन्द्र - वह स्थान कैसा है जहां तुम रहा करते हो और जहां मायारानी अपने दारोगा को लेकर तुम्हारे पास गई थी।

इंद्रदेव - वह स्थान तिलिस्म से संबंध रखता है और यहां से थोड़ी ही दूर पर है। मैं स्वयं आप लोगों को लेकर वहां की सैर कराऊंगा। इसके अतिरिक्त अभी मुझे बहुत-सी बातें कहनी हैं। पहले आप लोग भोजन से छुट्टी पा लें।

तेज - हम लोग मशाल की रोशनी में क्या आप ही लोगों को पहाड़ से उतरते देख रहे थे

इंद्र - जी हां, मैं एक निराले ही रास्ते से यहां आया हूं। आप लोग बेशक ताज्जुब करते होंगे कि पहाड़ पर से कौन उतर रहा है परंतु मैं अकेला ही नहीं आया हूं बल्कि कई तमाशे भी अपने साथ लाया हूं मगर उनका जिक्र करने का अभी मौका नहीं है।

इतना कहकर इंद्रदेव उठ खड़ा हुआ और देखते-देखते दूसरी तरफ चला गया, मगर उनकी इस बात ने कि - 'कई तमाशे भी अपने साथ लाया हूं' कइयों को ताज्जुब और घबड़ाहट में डाल दिया।

बयान - 11

थोड़ी ही देर बाद इंद्रदेव फिर वहां आया। अबकी दफे उसके साथ कई नकाबपोश भी थे जो अपने हाथ में तरह-तरह की खाने-पीने की चीजें लिए हुए थे। एक के हाथ में जल था जिससे जमीन धोई गई और खाने-पीने की चीजें वहां रखकर वे नकाबपोश लौट गये तथा पुनः कई जरूरी चीजें लेकर आ पहुंचे। इंतजाम ठीक हो जाने पर इंद्रदेव ने कायदे के साथ सभों को भोजन कराया और इस काम से छुट्टी मिलने पर उस बारहदरी में चलने के लिए अर्ज किया जिसे उसने यहां पहुंचकर सजाया था और जिसका हाल हम ऊपर के बयान में लिख चुके हैं।

वास्तव में यह बारहदरी बड़ी खूबी के साथ सजाई गई थी। यहां सभों के लिए कायदे के साथ बैठने और आराम करने का सामान मौजूद था जिसे देखकर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और इंद्रदेव की तरफ देखकर बोले, "क्या यह सब सामान इसी बाग में मौजूद था।"

इंद्र - जी हां, इतना ही नहीं बल्कि इस बाग में जितनी इमारतें हैं उन सभों को सजाने और दुरुस्त करने के लिए यहां काफी सामान है, इसके अतिरिक्त यहां से मेरा मकान बहुत नजदीक है, इसलिए जिस चीज की जरूरत हो मैं बहुत जल्द ला सकता हूं। (कुछ देर तक सोचकर और हाथ जोड़कर) मैं एक और भी बात अर्ज किया चाहता हूं।

महाराज - वह क्या?

इंद्र - यह तिलिस्म आप ही के बुजुर्गों की बदौलत बना है और उन्हीं की आज्ञानुसार जब से यह तिलिस्म तैयार हुआ है तब से मेरे बुजुर्ग लोग इसके दारोगा होते आये हैं। अब मेरे जमाने में इस तिलिस्म की किस्मत ने पलटा खाया है। यद्यपि कुमार इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह ने इस तिलिस्म को तोड़ा या फतह किया है और इसमें की बेहिसाब दौलत के मालिक हुए हैं तथापि यह तिलिस्म अभी तक दौलत से खाली नहीं हुआ है और न ऐसा खुल ही गया कि ऐरे- गैरे जिसका जी चाहे इसमें घुस आये। हां यदि आज्ञा हो तो दोनों कुमारों के हाथ से मैं इसके बचे-बचाये हिस्से को भी तोड़वा सकता हूं क्योंकि यह काम इस तिलिस्म के दारोगा का अर्थात् मेरा है, मगर मैं चाहता हूं कि बड़े लोगों की इस कीर्ति को एकदम से मटियामेट न करके भविष्य के लिए भी कुछ छोड़ देना चाहिए। आज्ञा पाने पर मैं इस तिलिस्म की पूरी सैर कराऊंगा और तब अर्ज करूंगा कि बुजुर्गों की आज्ञानुसार इस दास ने भी जहां तक हो सका इस तिलिस्म की खिदमत की, अब महाराज को अख्तियार है कि मुझसे हिसाब-किताब समझकर आइंदे के लिए जिसे चाहें यहां का दारोगा मुकर्रर करें।

महाराज - इंद्रदेव, मैं तुमसे और तुम्हारे कामों से बहुत ही प्रसन्न हूं मगर मैं यह नहीं चाहता कि तुम मुझे बातों के जाल में फंसाकर बेवकूफ बनाओ और यह कहो कि 'भविष्य के लिए किसी दूसरे को यहां का दारोगा मुकर्रर कर लो।' जो कुछ तुमने राय दी है वह बहुत ठीक है अर्थात् इस तिलिस्म के बचे-बचाये स्थानों को छोड़ देना चाहिए जिससे बड़े लोगों का नाम-निशान बना रहे मगर यहां के दारोगा की पदवी सिवाय तुम्हारे खानदान के कोई दूसरा कब पा सकता है बस दया करके इस ढंग की बातों को छोड़ दो और जो कुछ खुशी-खुशी कर रहे हो करो।

इंद्र - (अदब के साथ सलाम करके) जो आज्ञा। मैं एक बात और भी निवेदन किया चाहता हूं।

महाराज - वह क्या?

इंद्रदेव - वह यह कि इस जगह से आप कृपा करके पहले मेरे स्थान को, जहां मैं रहता हूं, पवित्र कीजिए और तब तिलिस्म की सैर करते हुए अपने चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी मकान में पहुंचिये। इसके अतिरिक्त इस तिलिस्म के अंदर जो कुछ कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह ने पाया है अथवा यहां से जिन चीजों को निकालकर चुनारगढ़ पहुंचाने की आवश्यकता है उनकी फेहरिस्त मुझे मिल जाय और ठीक तौर

पर बता दिया जाय कि कौन चीज कहां पर है तो उन्हें वहां से बाहर करके आपके पास भेजने का बंदोबस्त करूं। यद्यपि यह काम भैरोसिंह और तारासिंह भी कर सकते हैं परंतु जिस काम को मैं एक दिन में करूंगा उसे वे चार दिन में भी पूरा नहीं करेंगे क्योंकि मुझे यहां के कई रास्ते मालूम हैं, जिस चीज को जिस राह से निकाल ले जाने में सुबीता देखूंगा निकाल ले जाऊंगा।

महाराज - ठीक है, मैं भी इस बात को पसंद करता हूं और यह भी चाहता हूं कि चुनार पहुंचने के पहले ही तुम्हारे विचित्र स्थान की सैर कर लूं। चीजों की फेहरिस्त और उनका पता इंद्रजीतसिंह तुमको देंगे।

इतना कह के महाराज ने इंद्रजीतसिंह की तरफ देखा और कुमार ने उन सब चीजों का पता इंद्रदेव को बताया जिन्हें बाहर निकालकर घर पहुंचाने की आवश्यकता थी और साथ ही साथ अपना तिलिस्मी किस्सा भी जिसके कहने की जरूरत थी इंद्रदेव से बयान किया और बाद में दूसरी बातों का सिलसिला छिड़ा।

वीरेन्द्र - (इंद्रदेव से) आपने कहा था कि 'मैं कई तमाशे भी साथ लाया हूं' तो क्या वे तमाशे ढके ही रह जायेंगे।

इंद्रदेव - जी नहीं, आज्ञा हो तो उन्हें पेश करूं। परंतु यदि आप मेरे मकान पर चलकर उन तमाशों को देखेंगे तो कुछ विशेष आनंद मिलेगा।

महाराज - यही सही, हम लोग तो अभी तुम्हारे मकान पर चलने के लिए तैयार हैं।

इंद्रदेव - अब रात बहुत चली गई है, महाराज दो-चार घंटे आराम कर लें, दिन भर की हरारत मिट जाय, जब कुछ रात बाकी रह जायेगी तो मैं जगा दूंगा और अपने मकान की तरफ ले चलूंगा। जब तक मैं अपने साथियों को वहां रवाना कर देता हूं जिससे आगे चलकर सभों को होशियार कर दें और महाराज के लिए हर एक तरह का सामान दुरुस्त हो जाय।

इंद्रदेव की बात को महाराज ने पसंद करके सभों को आराम करने की आज्ञा दी और इंद्रदेव भी वहां से विदा होकर किसी दूसरी जगह चला गया।

इधर - उधर की बातचीत करते-करते महाराज को नींद आ गई, वीरेन्द्रसिंह, दोनों कुमार और राजा गोपालसिंह भी सो गये तथा और ऐयारों ने भी स्वप्न देखना आरंभ

किया मगर भूतनाथ की आंखों में नींद का नाम-निशान भी न था और वह तमाम रात जागता ही रह गया।

जब रात घंटे भर से कुछ ज्यादे बाकी रह गई और सुबह को अठखेलियों के साथ चलकर खुशदिलों तथा नौजवानों के दिलों में गुदगुदी पैदा करने वाली ठंडी-ठंडी हवा ने खुशबूदार जंगली फूलों और लताओं से हाथापाई करके उनकी संपत्ति छीनना और अपने को खुशबूदार बनाना शुरू कर दिया तब इंद्रदेव भी इस बारहदरी में आ पहुंचा और सभों को गहरी नींद में सोते देख जगाने का उद्योग करने लगा। इस बारहदरी के आगे की तरफ एक छोटा-सा सहन था जिसकी जमीन संगमूसा के स्याह और चौखूटे पत्थरों से मढ़ी हुई थी। इस सहन के दाहिने और बाएं कोनों पर दो-तीन आदमी बखूबी बैठ सकते थे। इंद्रदेव दाहिने तरफ वाले सिंहासन पर जाकर बैठ गया और उसके पावों को बारी-बारी से किसी हिसाब से घुमाने या उमेठने लगा। उसी समय सिंहासन के अंदर से सरस और मधुर बाजे की आवाज आने लगी और थोड़ी ही देर बाद गाने की आवाज भी पैदा हुई। मालूम होता था कि कई नौजवान औरतें बड़ी खूबी के साथ गा रही हैं और कई आदमी पखावज, बीन, बंशी, मंजीरा इत्यादि बजाकर उन्हें मदद पहुंचा रहे हैं। यह आवाज धीरे-धीरे बढ़ने और फैलने लगी, यहां तक कि उस बारहदरी में सोने वाले सभी लोगों को जगा दिया अर्थात् सब कोई चौंककर उठ बैठे और ताज्जुब के साथ इधर-उधर देखने लगे। केवल इतने ही से बेचैनी दूर न हुई और सब कोई बारहदरी से बाहर निकलकर सहन में चले आये, उस समय इंद्रदेव ने सामने आकर महाराज को सलाम किया।

महाराज - यह तो मालूम हो गया कि यह सब तुम्हारी कारीगरी का नतीजा है मगर बताओ तो सही कि यह गाने-बजाने की आवाज कहां से आ रही है?

इंद्र - आइए मैं बताता हूं। महाराज को जगाने ही के लिए यह तरकीब की गई थी क्योंकि अब यहां से रवाना होने का समय हो गया है, और विलंब न करना चाहिए।

इतना कहकर इंद्रदेव सभों को उस सिंहासन के पास ले गया जिसमें से गाने की आवाज आ रही थी। और उसका असल भेद समझाकर बोला, "इसमें से मौके-मौके पर हर एक रागिनी पैदा हो सकती है।"

इन अनूठे गाने-बजाने से महाराज बहुत प्रसन्न हुए और इसके बाद सभों को लिए हुए इंद्रदेव के मकान की तरफ रवाना हुए।

उस बारहदरी के बगल में ही एक कोठरी थी जिसमें सभों को साथ लिए हुए इंद्रदेव चला गया। इस समय इंद्रदेव के पास भी तिलिस्मी खंजर था जिससे उसने हल्की-सी रोशनी पैदा की और उसी के सहारे सभों को लिए हुए आगे की तरफ बढ़ा।

उस कोठरी में जाने के बाद पहले सभों को एक छोटे से तहखाने में उतरना पड़ा। वहां सभों ने लाल रंग की एक समाधि देखी जिसके बारे में दरियाफ्त करने पर इंद्रदेव ने कहा कि यह समाधि नहीं सुरंग का दरवाजा है। इंद्रदेव उस समाधि के पास बैठ गया और कोई ऐसी तरकीब की कि जिससे वह बीचों-बीच से खुल गई और नीचे उतरने के लिए चार-पांच सीढ़ियां दिखाई दीं। इंद्रदेव के कहे मुताबिक सब कोई नीचे उतर गये और इसके बाद सीधी सुरंग में चलने लगे। सुरंग की हालत और ऊंची-नीची जमीन से साफ-साफ मालूम होता था कि वह पहाड़ काटकर बनाई हुई है और सब लोग ऊंचे की तरफ बढ़ते जा रहे हैं। हमारे मुसाफिरों को दो-अढ़ाई घड़ी के लगभग चलना पड़ा और तब इंद्रदेव ने ठहरने के लिए कहा क्योंकि यहां पर सुरंग खत्म हो चुकी थी और सामने एक बंद दरवाजा दिखाई दे रहा था। इंद्रदेव ने ताली लगाकर ताला खोला और सभों को साथ लिए हुए उसके अंदर गया। सभों ने अपने को एक सुंदर कमरे में पाया और जब इस कमरे के बाहर हुए तब मालूम हुआ कि सबेरा हो चुका है।

यह इंद्रदेव का वही मकान है जिसमें बुड्ढे दारोगा के साथ मदद पाने की उम्मीद में मायारानी गई थी। इस सुंदर और सुहावने स्थान का हाल हम पहले लिख चुके हैं इसलिए अब पुनः बयान करने की कोई जरूरत मालूम नहीं होती।

इंद्रदेव सभों को लिए हुए अपने छोटे से बगीचे में गया। वहां चारों तरफ की सुंदर छटा दिखाई दे रही थी और खुशबूदार ठंडी-ठंडी हवा दिल और दिमाग के साथ दोस्ती का हक अदा कर रही थी।

महाराज सुरेन्द्रसिंह और वीरेन्द्रसिंह तथा दोनों कुमारों को यह स्थान बहुत पसंद आया और बार-बार इसकी तारीफ करने लगे। यद्यपि इस बगीचे में सभों के लायक दर्जे बदर्जे कुर्सियां बिछी हुई थीं मगर किसी का जी बैठने को नहीं चाहता था। सब कोई घूम-घूमकर यहां का आनंद लेना चाहते थे और ले रहे थे मगर इस बीच में एक ऐसा मामला हो गया जिसने भूतनाथ और देवीसिंह दोनों ही को चौंका दिया। एक आदमी जल से भरा हुआ चांदी का घड़ा और सोने की झारी लेकर आया और संगमर्मर की चौकी पर जो बगीचे में पड़ी हुई थी रखकर लौट चला। इसी आदमी को देखकर भूतनाथ और देवीसिंह चौंके थे क्योंकि यह वही आदमी था जिसे ये दोनों ऐयार नकाबपोशों के मकान में देख चुके थे। इसी आदमी ने नकाबपोशों के सामने

एक तस्वीर पेश की थी और कहा था कि "कृपानाथ, बस मैं इसी का दावा भूतनाथ पर करूंगा।"

केवल इतना ही नहीं, भूतनाथ ने वहां से थोड़ी दूर पर एक झाड़ी में अपनी स्त्री को भी फूल तोड़ते देखा और धीरे से देवीसिंह को छेड़कर कहा, "वह देखिए मेरी स्त्री भी वहां मौजूद है, ताज्जुब नहीं कि आपकी चंपा भी यहीं घूम रही हो।"

बयान - 12

यद्यपि भूतनाथ को तरद्दुदों से छुट्टी मिल चुकी थी, यद्यपि उसका कसूर माफ हो चुका था, और वह महाराज के खास ऐयारों में मिला लिया गया था मगर इस जगह उस आदमी को, जितने नकाबपोशों के मकान में तस्वीर पेश कर उस पर दावा करना चाहा था, देखकर उसकी अवस्था फिर बिगड़ गई और साथ ही इसके अपनी स्त्री को भी वहां काम करते हुए देखकर उसे क्रोध चढ़ आया।

जब वह आदमी पानी का घड़ा और झारी रखकर लौट चला तब इंद्रदेव ने उसे पुकारकर कहा, "अर्जुन, जरा वह तस्वीर भी तो ले आओ जिसे बार-बार तुम दिखाया करते हो और जो हमारे दोस्त भूतनाथ को डराने और धमकाने के लिए एक औजार की तरह तुम्हारे पास रखी हुई है।"

इस नाम ने भूतनाथ के कलेजे को और भी हिला दिया। वास्तव में उस आदमी का यही नाम था और इस खयाल ने तो उसे और भी बदहवास कर दिया कि अब वह तस्वीर लेकर आयेगा।

इस समय सब कोई बाग में टहल रहे थे और इसीलिए एक-दूसरे से कुछ दूर हो रहे थे। भूतनाथ बढ़कर देवीसिंह के पास चला गया और उसका हाथ पकड़कर धीरे-से बोला, "देखा इंद्रदेव का रंग-ढंग!'

देवी - (धीरे से) मैं सब-कुछ देख और समझ रहा हूं, मगर तुम घबड़ाओ नहीं।

भूत - मालूम होता है कि इंद्रदेव का दिल अभी तक मेरी तरफ से साफ नहीं हुआ।

देवी - शायद ऐसा ही हो मगर इंद्रदेव से ऐसी उम्मीद हो नहीं सकती, मेरा दिल इसे कबूल नहीं करता। मगर भूतनाथ तुम भी अजीब सिड़ी हो।

भूत - सो क्या?

देवी - यही कि नकाबपोशों का पीछा करके तुमने कैसे-कैसे तमाशे देखे और तुम्हें विश्वास भी हो गया कि इन नकाबपोशों से तुम्हारा कोई भेद छिपा नहीं है, फिर अंत में यह भी मालूम हो गया कि उन नकाबपोशों के सरदार कुंअर इंद्रजीतसिंह और आनंदसिंह थे अस्तु इन दोनों से भी अब कोई बात छिपी नहीं रही।

भूत - बेशक ऐसा ही है।

देवी - तो फिर अब क्यों तुम्हारा दम घुटा जाता है अब तुम्हें किसका डर रह गया।

भूत - कहते तो ठीक हो, खैर कोई चिंता नहीं जो कुछ होगा देखा जायगा।

देवी - बल्कि तुम्हें यह जानने की कोशिश करनी चाहिए कि दोनों कुमारों को तुम्हारे भेदों का पता क्योंकर लगा। ताज्जुब नहीं कि अब वे सब बातें खुला चाहती हों।

भूत - शायद ऐसा ही हो, मगर मेरी स्त्री के बारे में तुम क्या खयाल करते हो?

देवी - इस बारे में मेरा-तुम्हारा मामला एक-सा हो रहा है अस्तु इस विषय में मैं कुछ भी नहीं कह सकता। वह देखो इंद्रदेव तेजसिंह के पास चला गया है और तुम्हारी स्त्री की तरफ इशारा करके कुछ कह रहा है। तेजसिंह अलग हों तो मैं उनसे कुछ पूछूं। यहां की छटा ने तो लोगों का दिल ऐसा लुभा लिया है कि सभों ने एक-दूसरे का साथ ही छोड़ दिया। (चौंककर) लो देखो, तुम्हारा लड़का नानक भी तो आ पहुंचा, उसके हाथ में भी कोई तस्वीर मालूम पड़ती है, अर्जुन भी उसी के साथ है।

भूत - (ताज्जुब से) आश्चर्य की बात है! नानक और अर्जुन का साथ कैसे हुआ और नानक यहां आया ही क्यों क्या अपनी मां के साथ आया है क्या कपूत छोकरे ने भी मेरी तरफ से आंखें फेर ली हैं ओफ, यह तिलिस्मी जमीन तो मेरे लिए भयानक सिद्ध हो रही है, अच्छा-खासा तिलिस्म मुझे दिखाई दे रहा है। जिन पर मुझे विश्वास था, जिनका मुझे भरोसा था, जो मेरी इज्जत करते थे यहां उन्हीं को मैं अपना विपक्षी पाता हूं और वे मुझसे बात तक करना पसंद नहीं करते।

नानक और अर्जुन को भूतनाथ और देवीसिंह ताज्जुब के साथ देख रहे थे। नानक ने भी भूतनाथ को देखा मगर दूर ही से प्रणाम करके रह गया पास न आया और अर्जुन को लिए सीधे इंद्रदेव की तरफ चला गया जो तेजसिंह से बातें कर रहे थे। इस समय आज्ञानुसार अर्जुन अपने हाथ में तस्वीर लिए हुए था और नानक के हाथ में भी एक तस्वीर थी।

नानक और अर्जुन को अपने पास आते देख इंद्रदेव ने हाथ के इशारे से उन्हें दूर ही खड़े रहने के लिए कहा और उन्होंने भी ऐसा ही किया। कुछ देर तक और भी तेजसिंह के साथ इंद्रदेव बातें करता रहा इसके बाद इशारे से अर्जुन और नानक को अपने पास बुलाया और जब वे दोनों पास आ गए तो कुछ कह-सुनकर बिदा किया।

भूतनाथ यह सब तमाशा देखकर ताज्जुब कर रहा था। अर्जुन और नानक को बिदा करने के बाद तेजसिंह को साथ लिए हुए इंद्रदेव महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास गया जो एक सुंदर चट्टान पर खड़े-खड़े ढालवीं जमीन और पहाड़ी पर से नीचे की तरफ गिरते हुए सुंदर झरने की शोभा देख रहे थे और वीरेन्द्रसिंह भी उन्हीं के पास खड़े थे। वहां भी कुछ देर तक इंद्रदेव ने महाराज से बातचीत की और इसके बाद चारों आदमी लौटकर बगीचे में चले आये। महाराज को बगीचे में आते देख और सब कोई भी जो इधर-उधर फैले हुए तमाशा देख रहे थे बगीचे में आकर इकट्ठे हो गए और अब मानो महाराज का यह एक छोटा-सा दरबार बगीचे में लग गया।

वीरेन्द्र - (इंद्रदेव से) हां तो अब वे तमाशे कब देखने में आवेंगे जो आप अपने साथ तिलिस्म में लेते गये थे?

इंद्रदेव - जब आज्ञा हो तभी दिखाए जायं।

वीरेन्द्र - हम लोग तो देखने के लिए तैयार बैठे हैं।

जीत - मगर पहले यह मालूम हो जाना चाहिए कि उनके देखने में कितना समय लगेगा, अगर थोड़ी देर का काम हो तो अभी देख लिया जाय।

इंद्र - जी वह थोड़ी देर का काम तो नहीं है, इससे यही बेहतर होगा कि पहले जरूरी कामों से छुट्टी पाकर स्नान, ध्यान तथा भोजन इत्यादि से निवृत्त हो लें।

महाराज - हमारी भी यही राय है।

महाराज का मतलब समझकर सब कोई उठ खड़े हुए और जरूरी कामों से छुट्टी पाने की फिक्र में लगे। महाराज सुरेन्द्रसिंह, वीरेन्द्रसिंह तथा और भी सब कोई इंद्रदेव के उचित प्रबंध को देखकर बहुत प्रसन्न हुए, किसी को किसी तरह की तकलीफ न हुई और न कोई चीज मांगने की जरूरत ही पड़ी। इंद्रदेव के ऐयार और कई खिदमतगार आकर मौजूद हो गए और बात की बात में सब सामान ठीक हो गया।

स्नान तथा संध्या-पूजा इत्यादि से छुट्टी पाकर सभों ने भोजन किया और इसके बाद इंद्रदेव ने (बंगले के) एक बहुत बड़े और सजे हुए कमरे में सभों को बैठाया जहां सभों के योग्य दर्जे बदर्जे बैठने का इंतजाम किया गया था। एक ऊंची गद्दी पर महाराज सुरेन्द्रसिंह और उनके दाहिनी तरफ वीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, तेजसिंह, पंडित बद्रीनाथ, रामनारायण, पन्नालाल तथा भूतनाथ वगैरह बैठे।

कुछ देर तक इधर-उधर की बातचीत होती रही, इसके बाद इंद्रदेव ने हाथ जोड़कर पूछा - "अब यदि आज्ञा हो तो तमाशों को...।"

महाराज - हां-हां, अब तो हम लोग हर तरह से निश्चिंत हैं!

सलाम करके इंद्रदेव कमरे के बाहर चला गया और घड़ी भर तक लौट के नहीं आया, इसके बाद जब आया तो चुपचाप अपने स्थान पर आकर बैठ गया। सब कोई (भूतनाथ, पन्नालाल वगैरह) ताज्जुब के साथ उसका मुंह देख रहे थे कि इतने में ही सामने वाले दरवाजे का परदा हटा और नानक कमरे के अंदर आता हुआ दिखाई दिया। नानक ने बड़े अदब के साथ महाराज को सलाम किया और इंद्रदेव का इशारा पाकर एक किनारे बैठ गया। इस समय नानक के हाथ में एक बहुत बड़ी मगर लपेटी हुई तस्वीर थी जो कि उसने अपने बगल में रख ली।

नानक के बाद हाथ में तस्वीर लिए अर्जुन भी आ पहुंचा और महाराज को सलाम कर नानक के पास बैठ गया, उसी समय कमला का भाई अथवा भूतनाथ का लड़का हरनामसिंह दिखाई दिया, वह भी महाराज को प्रणाम करके अर्जुन के बगल में बैठ गया। हरनामसिंह के हाथ में एक छोटी-सी सन्दूकड़ी थी जिसे उसने अपने सामने रख लिया।

इसके बाद नकाब पहने हुई तीन औरतें कमरे के अंदर आईं और अदब के साथ महाराज को सलाम करती हुई दूसरे दरवाजे से कमरे के बाहर निकल गईं।

इस समय भूतनाथ और देवीसिंह के दिल की क्या हालत थी सो वे ही जानते होंगे। उन्हें इस बात का तो विश्वास ही था कि इन औरतों में एक तो भूतनाथ की स्त्री और दूसरी चंपा जरूर है मगर तीसरी औरत के बारे में कुछ भी नहीं कह सकते थे।

महाराज - (इंद्रदेव से) इन औरतों में भूतनाथ की स्त्री और चंपा जरूर होंगी!

इंद्र - (हाथ जोड़कर) जी हां कृपानाथ।

महाराज - और तीसरी औरत कौन है?

इंद्र - तीसरी एक बहुत ही गरीब, नेक, सूधी और जमाने की सताई हुई औरत है जिसे देखकर और जिसका हाल सुनकर महाराज को बड़ी ही दया आयेगी। यह वह औरत है जिसे मरे हुए एक जमाना हो गया मगर अब उसे विचित्र ढंग से पैदा होते देख लोगों को बड़ा ही ताज्जुब होगा

महाराज - आखिर वह औरत है कौन?

इंद्र - बेचारी दुःखिनी कमला की मां यानी भूतनाथ की पहली स्त्री।

यह सुनते ही भूतनाथ चिल्ला उठा और उसने बड़ी मुश्किल से अपने को बेहोश होने से रोका।

(इक्कीसवां भाग समाप्त)

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati

चंद्रकांता संतति लोक विश्रुत साहित्यकार बाबू देवकीनंदन खत्री का विश्वप्रसिद्ध ऐय्यारी उपन्यास है।

बाबू देवकीनंदन खत्री जी ने पहले चन्द्रकान्ता लिखा फिर उसकी लोकप्रियता और सफलता को देख कर उन्होंने कहानी को आगे बढ़ाया और 'चन्द्रकान्ता संतति' की रचना की। हिन्दी के प्रचार प्रसार में यह उपन्यास मील का पत्थर है। कहते हैं कि लाखों लोगों ने चन्द्रकान्ता संतति को पढ़ने के लिए ही हिन्दी सीखी। घटना प्रधान, तिलिस्म, जादूगरी, रहस्यलोक, एय्यारी की पृष्ठभूमि वाला हिन्दी का यह उपन्यास आज भी लोकप्रियता के शीर्ष पर है।

बाबू देवकीनंदन खत्री लिखित चन्द्रकान्ता संतति हिन्दी साहित्य का ऐसा उपन्यास है जिसने पूरे देश में तहलका मचाया था। इस उपन्यास की लोकप्रियता का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इसे पढ़ने के लिए हजारों गैर-हिंदी भाषियों ने हिंदी सीखी। चंद्रकांता संतति उपन्यास को आधार बनाकर निरजा गुलेरी ने इसी नाम से टेलीविजन धारावाहिक बनाई। यह धारावाहिक दूरदर्शन के सर्वाधिक लोकप्रिय धारावाहिकों में शुमार हुई।

"चन्द्रकान्ता" और "चन्द्रकान्ता सन्तति" में यद्यपि इस बात का पता नहीं लगेगा कि कब और कहाँ भाषा का परिवर्तन हो गया परन्तु उसके आरम्भ और अन्त में आप ठीक वैसा ही परिवर्तन पायेंगे जैसा बालक और वृद्ध में। एक दम से बहुत से संस्कृत शब्दों का प्रचार करते तो कभी सम्भव न था कि उतने संस्कृत शब्द हम ग्रामीण लोगों को याद करा देते। इस पुस्तक के लिए वह लोग भी बोधगम्य उर्दू के शब्दों को अपनी विशुद्ध हिन्दी में लाने लगे जो आरम्भ में इसका विरोध करते थे।

काव्य के लिए ब्रज भाषा का प्रयोग होता था और गद्य के लिए खड़ी बोली का। लेखक ने इसी का अनुसरण करते हुए उपन्यास के काव्यांशों के लिए ब्रज भाषा चुना है।

चंद्रकांता संतति - Chandrakanta Santati in Hindi

1. चंद्रकांता संतति पहला भाग
2. चंद्रकांता संतति दूसरा भाग
3. चंद्रकांता संतति तीसरा भाग
4. चंद्रकांता संतति चौथा भाग
5. चंद्रकांता संतति पाँचवाँ भाग
6. चंद्रकांता संतति छठवां भाग
7. चंद्रकांता संतति सातवाँ भाग
8. चंद्रकांता संतति आठवाँ भाग
9. चंद्रकांता संतति नौवां भाग
10. चंद्रकांता संतति दसवां भाग
11. चंद्रकांता संतति ग्यारहवां भाग
12. चंद्रकांता संतति बारहवां भाग
13. चंद्रकांता संतति तेरहवां भाग
14. चंद्रकांता संतति चौदहवां भाग
15. चंद्रकांता संतति पन्द्रहवां भाग
16. चंद्रकांता संतति सोलहवां भाग
17. चंद्रकांता संतति सत्रहवां भाग
18. चंद्रकांता संतति अठारहवां भाग
19. चंद्रकांता संतति उन्नीसवां भाग
20. चंद्रकांता संतति बीसवां भाग
21. चंद्रकांता संतति इक्कीसवां भाग
22. चंद्रकांता संतति बाईसवां भाग
23. चंद्रकांता संतति तेईसवां भाग
24. चंद्रकांता संतति चौबीसवां भाग

https://www.hindiadda.com/chandrakanta-santati-part-xxi/